राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय।

सत्सङ्ग के उपदेश

भाग तीसरा

जिसको

प्रेमी परमार्थियों के हितार्थ

राधास्वामी सत्सङ्ग सभा, दयालबाग़, आगरा,

ने

दयालबाग़, आगरा, से प्रकाशित किया।

राधास्वामी सम्वत् ११५

प्रथमबार] सन् १९३२ ई० । [२००० पुस्तकें ।

भूमिका

सत्संग के उपदेश के दो भाग पहले प्रकाशित हो चुके हैं। अब यह तीसरा भाग पेश किया जाता है।

इस भाग में वे मिश्रित वचन दर्ज हैं जो हुज़ूर साहबजी महाराज ने आम सत्संग में फ़र्माये और वक्तन् फ़वक्तन् प्रेमप्रचारक में प्रकाशित होते रहे। इन वचनों को हिन्दी भाषा व पुस्तक की शकल में छापने के लिये यह ज़रूरी हुआ कि पहले की इबारत में जहाँ तहाँ तब्दीलियाँ की जावें ताकि वचनों का मज़मून पाठकगण आसानी से समझ सकें।

आशा है कि पहले दो भागों की तरह यह भाग भी सत्संगी भाइयों के लिये मुफ़ीद साबित होगा।

प्रकाशक

राधास्वामी दयाल की दया

राधास्वामी सहाय

सत्सङ्ग के उपदेश

भाग तीसरा

वचन (१)

सत्संगियों को चाहिये कि अपने रोज़ाना कामों के लिये वक़्त मुक़र्रर कर लें और जहाँ तक मुमकिन हो मुक़र्ररा वक़्त की पाबन्दी करें। इसमें बड़ा आराम रहता है और सारे काम निपट जाते हैं। सवेरे उठते ही हाजात ज़रूरी से फ़ारिग़ होकर घंटा आध घंटा अभ्यास करें और दिन का काम ख़त्म होने पर सोने से पहले फिर अभ्यास में बैठें और फिर देखें कि स्वार्थी व परमार्थी सभी काम किस ख़ूबसूरती से सरंजाम पाते हैं।

वचन (२)

ख़ुदमतलबी लोगों ने मशहूर कर रक्खा है कि कृष्ण महाराज भेष बदल कर वृन्दावन की गलियों में भ्रमण करते हैं और भक्तों से मुलाक़ात और मन्दिरों की सैर करते हैं। अब जब कि कृष्ण महाराज देहरूप में नहीं हैं

और अपने धाम को लौट गये हैं उनका दर्शन आसान नहीं रहा। हुज़ूर राधास्वामी दयाल का वचन है कि मालिक का दर्शन या तो निज घट में तलाश करने से मिल सकता है या निज धाम में पहुँचने या पूरे गुरु के चरणों में हाज़िर होने से। मन्दिरों व मसजिदों में भरमने से मुतलाशी की यह आरज़ू पूरी नहीं हो सकती।

चुनाँचे फ़र्माया है:—

खोज री पिया को निज घट में ॥ टेक॥

जो तुम पिया से मिलना चाहो, तो भटको मत जग में ॥ १ ॥
तीरथ व्रत कर्म आचारा, यह अटकावें मग में ॥ २ ॥
जब लग सतगुरु मिलें न पूरे, पड़े रहोगे अघ में ॥ ३ ॥
नामसुधारस कभी न पाओ, भरमो जोनी खग में ॥ ४ ॥
पण्डित काज़ी भेष शेख़ सब, अटक रहे डग डग में ॥ ५ ॥
इनके संग पिया नहिं मिलना, पिया मिलें कोइ साधसमग में ॥ ६ ॥
यह तो भूले विषयबास में, भर्म धसे इनकी रग रग में ॥ ७ ॥
बिना सन्त कोइ भेद न पावे, वे तोहि कहें अलग में ॥ ८ ॥
जब लग सन्त मिलें नहिं तुमको, खाय ठगौरी तू इन ठग में ॥ ९ ॥
राधास्वामी सरन गहो तो, रलो जोति जगमग में ॥ १० ॥

बचन (३)

सत्संगी आम तौर पर इस बात से वाक़िफ़ नहीं हैं कि अगर सत्संग में सत्संग शुरू होने से कुछ वक़्त पहले हाज़िर न हुआ जाय तो सत्संग के वक़्त मन उचाट रहता है। बाज़ सत्संगी दो चार मिनट की देर की परवा नहीं करते

और नाहक़ अपने तईं सत्संग के नफ़े से महरूम कर देते हैं। मुनासिब तो यह है कि सत्संग शुरू होने से घंटा आध घंटा पहले अपनी तबीअत को सत्संग के लायक़ बनाया जावे यानी अगर थकान मालूम होती हो तो लेट कर आराम किया जावे, अगर सुस्ती मालूम होती हो तो थोड़ी देर चहलक़दमी की जावे या लेट कर सुमिरन ध्यान किया जावे, अगर तेज़ भूख लगी है तो थोड़ा सा खाना खा लिया जावे और ख़ास एहतियात इस बात की रक्खी जावे कि इस वक़्त सिवाय बहुत ज़रूरी मुआमले के किसी के साथ बात चीत न की जावे। अगर कोई शख़्स इस तरह तबीअत को साफ़ सुथरी करके सत्संग शुरू होने से कुछ वक़्त पहले सत्संग में आवे और सुमिरन ध्यान में लग जावे और सत्संग शुरू होने पर प्रेम व उमंग के साथ सत्संग की कारखाई में शरीक हो और होशियार यानी चेतन रहे तो उसे एक ही मर्तबा के तजरुबे से मालूम हो जावेगा कि सत्संग की हाज़िरी से क्या लाभ होता है। दुनिया में कोई भी काम लापरवाई से किया जावे तो नतीजा हमेशा ख़राब रहता है। परमार्थ के मुआमले में होशियार रहने की तो बेहद ज़रूरत है वरना ख़ुद अपना मन या तन बेक़ाबू होकर निरासता की सूरत पैदा कर देता है।

बचन (४)

इन्सान का धन और औलाद में बड़ा ज़बरदस्त बन्धन है। इस बन्धन से वही छुटकारा पा सकता है जो धन और औलाद की निस्बत मालिक को ज़्यादा प्यार करता है और उसकी रज़ा हासिल किया चाहता है। संसार का क़ायदा है कि हर शख़्स बढ़िया चीज़ मिलने पर घटिया को फेंक देता है। इसलिये जब तक किसी के दिल में मालिक की प्रसन्नता की महिमा नहीं बसती और मालिक की प्रसन्नता हासिल करने के लिये तेज़ ख़्वाहिश पैदा नहीं होती वह बराबर रुपये ही को पकड़ेगा और उसकी यही ख़्वाहिश होगी कि उसका रुपया सिर्फ़ उसके और उसकी औलाद के काम में आवे। सत्संग में रुपया पैसा भेंट करने का रिवाज जिन वजहों से क़ायम हुआ उनमें से एक इस बन्धन का काटना भी है।

बचन (५)

दुनिया में हर शख़्स अपना हुक्म चलाया चाहता है और अपना हुक्म चलता देख कर ख़ुश होता है इसलिये बहुत ही कम ऐसे आदमी मिलेंगे जिन्हें मन को रोकने और रोक रखने की आदत हो। यह दुरुस्त है कि मन की लहरों में बहने में बड़ा लुत्फ़ है मगर जो आनन्द मन को रोक कर अन्तर्मुख लगने में है वह उससें कहीं बढ़कर है। लेकिन

क्या किया जावे, यह बात लोगों की समझ ही में नहीं आती। पर उन बेचारों का भी ज़्यादा क़ुसूर नहीं है। जिन बातों का अन्तरी तजरुबों से सम्बन्ध हो वे दलील से कैसे समझी जा सकती हैं ? मन के रोकने में शुरू में तो मुश्किल पड़ती है लेकिन कुछ दिन साधन करने पर मन का रोकना क़दरे आसान हो जाता है और एक मर्तबा अन्तरी आनन्द मिलने पर तो मन ख़ुद उसके लिये चाह उठाने लगता है। जब तक यह बात भली प्रकार सत्संगियों की समझ में न आ जावेगी उनकी नीज़ सत्संग की चाल ढीली रहेगी।

वचन (६)

सत्संग का पोलिटिकल तहरीक से सम्बन्ध नहीं हो सकता क्योंकि दोनों के लक्ष्य में ज़मीन आसमान का भेद है। सत्संग की तालीम का मुख्य उद्देश्य मुक्ति है और मुक्ति के मानी छूटना है और छूटना क़ैदों व बन्धनों से होता है, चुनाँचे सत्संग का उद्देश्य जीव को मन व माया के बन्धनों से छुड़ाना है और चूँकि संसार और उसके सामान बन्धनरूप हैं इसलिये सत्संग संसार की जानिब से वैराग्य पैदा कराता है और पोलिटिकल तहरीक का मतलब संसार की उन्नति और संसार का राज पाट हासिल करना है। दूसरे शब्दों में जिस वस्तु के बन्धन से परमार्थ

छुड़ाता है पोलिटिकल तहरीक उसी के बन्धन दृढ़ कराती है। सत्संग का प्रेमी अपने परम पिता को याद करते वक़्त अगर ऊपर आकाश की तरफ़ दृष्टि करता है तो पोलिटिकल तहरीक का प्रेमी लौकिक उन्नति के लिये नीचे ज़मीन की तरफ़ देखता है।

बचन (७)

बाज़ लोग ऐतराज़ करते हैं कि सत्संगी अपने मज़हब को सबसे अच्छा क्यों कहते हैं। इसका जवाब यह है कि हर शख़्स ही अपने मज़हब को सबसे अच्छा जानता और मानता है। वजह यह है कि जब कोई अक़्लमन्द शख़्स कोई रास्ता इख़्तियार करता है तो वह उसको दूसरे रास्तों से बेहतर ही समझ कर इख़्तियार करता है और अगर सवाल किये जाने पर वह उस रास्ते को सबसे बेहतर कहे तो उसका कुछ दोष नहीं है। वह सिर्फ़ अपना विश्वास ज़ाहिर करता है।

बचन (८)

परमार्थ का असली उद्देश्य जीव को सच्चे मालिक के दर्शन दिलवाना है मगर मुश्किल यह है कि यह उद्देश्य उसी शख़्स को पसन्द आवेगा जिसके अन्दर क़ाबिलियत या संस्कार उस दौलत के हासिल करने का मौजूद हो। इस दर्शन के मुतअल्लिक़ राधास्वामी-मत का यह कथन है

कि सुरत-शब्द अभ्यास की कमाई से मनुष्य की छिपी हुई आध्यात्मिक शक्तियाँ जग जाती हैं और ऊँचे से ऊँचे दर्जे की आध्यात्मिक शक्ति के जग जाने पर मनुष्य को सच्चे मालिक का दर्शन ऐसे ही प्राप्त हो जाता है जैसे किसी अन्धे को आँख के बन जाने पर सूर्य का दर्शन प्राप्त होता है। मालिक का दर्शन प्राप्त होते ही जीव के सब पाप, हृदय की ग्रन्थियाँ, संशय और कर्म नाश हो जाते हैं और उसकी चेतनरूप आत्मा हर तरह से आज़ाद हो कर निर्मल चेतन देश में, जिसे मालिक का धाम कहते हैं, हमेशा के लिये निवास करती है। इसी को सच्ची मुक्ति कहते हैं।

बचन (६)

ज्यों ज्यों कोई जमाअत तरक़्क़ी करती है त्यों त्यों उसे एक से एक बढ़ कर मुख़ालिफ़त का सामना करना पड़ता है और मर्ज़ी के ख़िलाफ़ मुश्किलें व मुसीबतें सिर पर आते ही बहुत से मेम्बरों का दिल बैठ जाता है। चुनाँचे ऐसा समय आने पर बहुत से सिक्खों ने गुरु गोविन्दसिंह साहब का साथ छोड़ दिया हालाँकि वे अर्से से उनके चरणों में प्रीति व भाव रखते थे। याद रहे कि सत्संग के अन्दर भी ऐसी सूरत प्रकट हो सकती है। सत्संगियों का यह उम्मीद करना कि सत्संग दिन रात

बढ़ता रहे और उसके सिर पर कोई मुसीबत न आवे, नादुरुस्त है। अलबत्ता दया से इतना ज़रूर होगा कि मुसीबत के बादल आवेंगे मगर ज़्यादा न बरसेंगे यानी मामूली बूँदें बरसा कर ग़ायब हो जायँगे और रक्षा का हाथ संगत के सिर पर रहेगा। बेहतर होगा कि कमज़ोर-दिल सत्संगी या तो अपनी कमज़ोरी छोड़ दें या अभी से सत्संग से अलहदगी इख़्तियार कर लें।

बचन (१०)

आजकल आम लोग आज़ादी के मानी यह समझते हैं कि जो जिसके दिल में आवे सो करे। मगर विचार करो कि इस हिसाब से बच्चे व मूर्ख कितनी मुसीबत पैदा कर सकते हैं। जैसे बच्चे व मूर्ख अज्ञानतावश ऐसे काम करते हैं जो खुद उनके, नीज़ दूसरों के लिये दुखदाई होते हैं ऐसे ही आम इन्सान इस तरह की आज़ादी पा कर संसार के अन्दर ऐसे उत्पात करेंगे कि ज़िन्दगी का क़ायम रहना ही मुश्किल हो जावेगा। इसलिये आज़ादी के ये अर्थ ग़लत हैं। अलावा इसके हर एक इन्सान अपनी पुरानी आदतों व वासनाओं का, अपने पुराने संगदोषों का और अपने माँ बाप की आदतों व वासनाओं का ग़ुलाम है। जब तक किसी को इन दोषों से छुटकारा न मिल जाय वह सिर्फ़ मुँह से आज़ादी का नाम ले सकता है उसका

अनुभव या तजरुबा हासिल नहीं कर सकता। इन्सान को असली आज़ादी तन व मन से क़तई छुटकारा हासिल करने पर मिलती है। देह में रहते हुए देहअधीन आज़ादी ही प्राप्त हो सकती है जो कि असली आज़ादी नहीं है।

वचन (११)

बाज़ लोग बुरे काम तो ख़ुद करते हैं या काम काज करते वक़्त ग़फ़लत या लापरवाई से तो ख़ुद बरतते हैं और तकलीफ़ या नाकामयाबी की सूरत प्रकट होने पर ज़िम्मेदारी व इलज़ाम काल या क़िस्मत के सिर डाल कर अपना इतमीनान किया चाहते हैं। इन लोगों का यह ढंग बिल्कुल नामुनासिब है। सत्संग का उपदेश यह है कि अव्वल मनुष्य पूरी कोशिश करे और अच्छी नीयत से कोशिश करे और अगर अन्त में नाकामयाबी हो तो कहे कि मालिक की मौज कामयाबी के लिये न थी या किसी काम में बिला ख़ास या पूरी कोशिश किये कामयाबी हो जाने पर कहे कि मालिक की मौज से कामयाबी हासिल हुई। इन दोनों सूरतों में मालिक की मौज का हवाला देना फ़ायदामन्द है। पहली सूरत में निरासता से रक्षा रहती है और दूसरी सूरत में अहंकार से। निरासता व अहंकार दोनों इन्सान को मालिक से हटाने वाले हैं इसलिये इन दोनों को दिल से दूर रखने के निमित्त मालिक की मौज का आसरा लेना फ़ायदामन्द है।

बचन (१२)

संसार में किसी इच्छा के पूर्ण होने पर जो ख़ुशी व इतमीनान की हालत पैदा होती है उसी को शान्ति मानते हैं मगर परमार्थ में शान्ति दूसरी ही अवस्था का नाम है। यह निर्मल चेतन अवस्था और दसमद्वार की प्रज्ञा है यानी सुरत के, शरीर और मन की मैल से निवृत्त हो कर, निर्मल चेतन-मण्डल के दरवाज़े में प्रवेश करने पर आनन्द व प्रकाश लिये हुए जो ज्ञान-अवस्था प्रकट होती है उसको शान्ति कहते हैं। संसार में इच्छा के पूर्ण होने पर जो शान्ति होती है वह आरज़ी जोश का नतीजा होती है चुनाँचे जोश कम हो जाने पर वह शान्ति ग़ायब हो जाती है लेकिन जिस शान्ति की परमार्थ में महिमा है उसमें किसी क़िस्म की कमी वाक़े नहीं होती बल्कि जब प्रेमीजन की सुरत दसमद्वार से आगे प्रवेश करती है तो उसमें तरक़्क़ी होती है। यह शान्ति प्राप्त करने के लिये मुनासिब है कि अव्वल मनुष्य अपने दिल में बसी हुई संसारी वासनाओं में कमी करे और राज़ी बरज़ा रहने की आदत डाले और फिर अपनी सुरत सहसदलकमल के स्थान पर पहुँचावे। यहाँ ज्योति का दर्शन होने पर संसार के सब प्रकाश धुँधले और तपनरूप दरसने लगते हैं और ज्योति का प्रकाश शान्तिमय भासता है। इसके बाद त्रिकुटी स्थान के धनी से, जिसका रंग लाल सूरज का बयान किया गया है और जिसे सविता

कहते हैं, तअल्लुक़ क़ायम करके यहाँ के प्रकाश का अनुभव करे और फिर दसमद्वार में, जिसे परब्रह्मपद, चन्द्रविन्दुपद और चन्द्रलोक भी कहते हैं, प्रवेश करके यहाँ की शान्तिमय प्रभा का आनन्द ले। ज़ाहिर है कि इस युक्ति के सीखने और दुरुस्ती के साथ कमाने के लिये ज़रूरी है कि मनुष्य किसी ऐसे महापुरुष की शरण ले जिसे यह विद्या आती है और जिसने युक्ति की कमाई करके असली शान्ति का अनुभव किया है।

वचन (१२)

लोग कहते हैं कि अगर शब्द आत्मा का गुण है तो वह हर आत्मा को आप से आप सुनाई देना चाहिये लेकिन आम लोगों को अन्तरी शब्द सुनाई नहीं देता। इसमें भूल यह है कि प्रश्न करने वाला और आम लोगों के शरीर का अभिमानी आत्मा नहीं है बल्कि जीवात्मा है जो कि आत्मा यानी सुरत व मन की मिलौनी का परिणाम है। आत्मा व जीवात्मा में ज़मीन आसमान का अन्तर है पर आम लोग जीवात्मा ही को आत्मा समझते हैं। अगर जीवात्मा ही आत्मा हो तो फिर आत्मज्ञान कठिन कहाँ रहा और उसकी प्राप्ति के लिये किसी साधन की क्या ज़रूरत रही ? जाग्रत् अवस्था में हर शख़्स को ज्ञान प्राप्त रहता है क्योंकि हर शख़्स कहता है "मैं खाता हूँ",

"मैं बोलता हूँ", अगर यह "मैं" ही आत्मा हो तो हर इन्सान को इस "मैं" का और इसकी क्रियाओं का ज्ञान आगे ही हासिल है। इसलिये ज़ाहिर है कि जीवात्मा व आत्मा में बड़ा भेद है। अन्तरी शब्द हर आत्मा को सुनाई देता है पर जीवात्मा उसे नहीं सुन सकता क्योंकि वह आत्मा का गुण है।

बचन (१४)

जो लोग सत्संग का हाल समझने के लिये आवें उन्हें चाहिये कि अपने मतलब की बातों की जानिब ध्यान दें और ग़ैरज़रूरी बातों से मतलब न रक्खें। मसलन् बाज़ लोग पूछते हैं कि फ़ुलाँ काम क्यों करते हो, साफ़ कपड़ा क्यों पहिनते हो। ऐसे सवालात जिज्ञासु के लिये बिल्कुल व्यर्थ हैं। उसको देखना यह चाहिये कि आया सत्संग का अधिष्ठाता संसार के सामानों में, जो उसे प्राप्त हैं, लिप्त है या नहीं और संसारी नफ़ा व नुक़्सान की सूरतों में सुखी दुखी होता है या नहीं। वह अपनी राय से काम करता है या दूसरों की समझ बूझ से काम चलाता है। वह मुश्किलों के आने पर या अपना काम चलाने में परेशान हो जाता है या अनुभव शक्ति जागृत होने से अपने सब काम आसानी व सहूलियत के साथ अंजाम देता है। अगर कोई शख़्स संसार के सामानों में लिप्त नहीं है और नफ़ा

व नुक़्सान की सूरतें उसके चित्त को डाँवाडोल नहीं कर सकतीं और जो बेलाग व आज़ादाना काम करता है और मामूली समझ बूझ के बजाय अनुभवशक्ति से काम चलाता है तो समझना चाहिये कि उसको अपने मन व इन्द्रियों पर क़ाबू हासिल है और वह अपनी तवज्जुह अपनी मर्ज़ी के अनुसार अन्तर व बाहर मुख़ातिब करने में क़ादिर है। इसके बाद यह देखना चाहिये कि आया वह दिन रात संसारी कामों में उलझा रहता है या वक़्त निकाल कर परमार्थ की जानिब भी काफ़ी तवज्जुह देता है। जिस शख़्स को अपने मन व इन्द्रियों पर क़ाबू हासिल है, जिसकी किसी के साथ ख़ास मुहब्बत या नफ़रत नहीं है, जो सांसारिक धर्मों के पालन के अलावा आत्मविद्या का भी शौक़ रखता है और मौक़ा मिलने पर अपने परम पिता के गुणानुवाद गाता है, जो अमीर व ग़रीब और विद्वान् व मूर्ख से यकसाँ बर्ताव करता है, जो ऐसे लोगों को, जिनके अन्दर सच्चे मालिक या परमार्थ के लिये प्रेम है, अज़ीज़ रखता है और जिसकी दिली कोशिश यह है कि उसके संगी साथी सच्चे मालिक के सच्चे प्रेमी बन जावें, ऐसा शख़्स ज़रूर परमार्थ के रहस्यों से वाकिफ़ है और उसके संग से जिज्ञासु को ज़रूर लाभ होगा।

बचन (१५)

बाज़ लोग सत्संग की आर्थिक संस्थाओं को देख कर तर्क करते हैं कि सच्चे परमार्थ में ऐसी संस्थाओं का होना नामुनासिब है। ऐतिहासिक ग्रन्थों के पढ़ने से मालूम होता है कि कहीं पर लोगों की जमाअत क़ायम होने पर या तो उन्हें भीख माँगने की सूझी या लूट मार करने की, और इन कारखाइयों का अन्दरूनी दोष छिपाने के लिये भीख माँगने का नाम "धर्म" या "परोपकार" और लूट मार करने का नाम "मतप्रचार" रक्खा लेकिन राधास्वामी-मत में इन दोनों का निषेध है। राधास्वामीमत की शिक्षा-नुसार भीख माँगकर धार्मिक संस्थाएँ क़ायम करना वैसा ही मना है जैसा कि लूट मार करके अपना पेट भरना और दूसरों को अपना हममज़हब बनाने के बहाने से उनकी दौलत पर हाथ फेरना। हर सत्संगी के लिये हुक्म है कि अपनी हक़ व हलाल की कमाई में गुज़र करे। ऐसा हुक्म जारी होने पर सत्संग का फ़र्ज़ हो जाता है कि सत्संगियों के लिये हक़ व हलाल की कमाई हासिल करने के मुतअल्लिक़ रास्ते निकाले और उन्हें ज़िन्दा मिसाल से दिखलावे कि कैसे बिला लूट मार किये व भीख माँगे बड़ी बड़ी जमाअतें अपना गुज़र कर सकती हैं। इसमें शक नहीं कि राधास्वामी दयाल ने यह एक नई चाल चलाई है लेकिन जो लोग सत्संग की इस चाल के मुतअल्लिक़ तर्क करते हैं उन्हें चाहिये कि अव्वल इसके हर पहलू पर अच्छी तरह ग़ौर कर लें।

बचन (१६)

सत्संगी के लिये सभी जीव यकसाँ हैं क्योंकि सभी मालिक के बच्चे हैं। मगर जीवों में पात्र, संस्कार या क़ाबिलियत का फ़र्क़ ज़रूर रहता है। हमारे हाथ, पाँव, दिमाग़ वग़ैरह एक ही शरीर के अंग रहते हुए अलग अलग अधिकार रखते हैं। पुरुषसूक्त में जो ब्राह्मणों की पैदायश पुरुष के मुख से, क्षत्रियों की बाज़ू से, वैश्यों की रान से और शूद्रों की पाँव से बतलाई गई है उससे भी अधिकार का फ़र्क़ ज़ाहिर होता है। लेकिन चूँकि सब जातियाँ एक ही पुरुष के शरीर के अंग हैं इसलिये उनमें न कोई छोटा है, न बड़ा। उनके अधिकार में अलबत्ता फ़र्क़ है। इसलिये अगर हरएक जाति अपने अपने अधिकार के मुताबिक़ काम करे तो कुल शरीर यानी प्राणीमात्र का सहज में कल्याण हो जाय।

बचन (१७)

रामायण की कथा हर कोई जानता है और इस कथा के सुनने पर हर किसी का दिल भर आता है। सत्संगियों के लिये इस कथा का सुनना व जानना तभी सफल होगा जब वे राम की तरह अपने पिता राधास्वामी दयाल के आज्ञाकारी बनने का प्रण धारण करें, और लक्ष्मण की तरह अपने सत्संगी भाइयों से प्रेम, श्रद्धा व उदारता का

बर्ताव करें और हनुमान की तरह अपने इष्टदेव राधास्वामी दयाल का सच्चा भक्त बनने की कोशिश करें और आलस्य, भय, लोभ या इन्द्रियभोग के वस हो कर अपने तईं भक्ति-मार्ग से पतित न होने दें।

बचन (१८)

अगर सत्संगी बढ़ कर सेवा करने का मौक़ा हासिल करने की ग़रज़ से दुनिया में बड़ा दर्जा मिलने के लिये प्रार्थना व कोशिश करे तो निहायत जायज़ व दुरुस्त है। लेकिन अगर इज़्ज़त, दौलत व हुकूमत का रस लेने की ग़रज़ से प्रार्थना व कोशिश करे तो नाजायज़ व नामुनासिब है। जिस शख़्स को सच्चे मालिक के दर्शन, सच्ची मुक्ति, और ऊँची से ऊँची रूहानी गति की प्राप्ति के लिये रास्ता मिल गया और जिसने इन बातों को अपनी ज़िन्दगी का उद्देश्य क़रार दिया उसके लिये दुनिया का रुतबा, दौलत व हुकूमत क्या हैसियत रखते हैं? चूँकि हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने स्वार्थ व परमार्थ दोनों के कमाने के लिये उपदेश फ़र्माया है इसलिये सत्संग में स्वार्थ के लिये गुँजायश निकल आई है वरना स्वार्थ की क्या हक़ीक़त कि सच्चे परमार्थ से आँख मिला सके। इसलिये याद रखना चाहिये कि हरचन्द सत्संगी को स्वार्थ कमाने की इजाज़त है लेकिन हर हालत में मुख्यता परमार्थ ही की रहेगी।

वचन (१९)

सन्तमत में बतलाया जाता है कि सत्संगी की अन्त समय में ख़ास तरह से सँभाल होती है। बाज़ लोग सन्तमत के इस सिद्धान्त पर सख़्त ऐतराज़ करते हैं मगर वे यह भूल जाते हैं कि जन्म के वक़्त जीवों की सँभाल के लिये भी तो मालिक की जानिब से पूरा इन्तिज़ाम है। जब बच्चा पैदा होता है तो उसकी आसायश के लिये माँ-बाप अपनी जानिब से कितनी कोशिश करते हैं हालाँकि जन्म लेने वाला बच्चा बिल्कुल अजनबी होता है। अलावा इसके जो बच्चा किसी अमीर घर में जन्म लेता है उसके लिये बमुक़ाबिले एक कंगाल के घर में जन्म लेने वाले बच्चे के कहीं बढ़कर इन्तिज़ाम रहता है। इसलिये यह समझने में कोई दिक़्क़त नहीं होनी चाहिये कि अन्त समय पर संस्कारों के फ़र्क़ की वजह से सत्संगी को आम जीवों के मुक़ाबिले ख़ास सहूलियत मिलती है।

वचन (२०)

लोग कहते हैं कि काफ़ी आमदनी होने से इन्सान आप से आप तरक़्क़ी कर जाता है, मगर यह ग़लत है। दौलत तो आम तौर पर इन्सान को अन्धा कर देती है। जो अक़्लमन्द हैं वे ही दौलत से फ़ायदा उठाते हैं बाक़ी सब उसके नशे में अन्धे हो जाते हैं। असली तरक़्क़ी इन्सान

तभी कर सकता है जब उसकी रूहानियत में इज़ाफ़ा हो। बाज़ सत्संगी दरयाफ़्त करते हैं कि हिन्दुस्तान को तरक़्क़ी देने के लिये वे क्या उपाय करें? सो जवाब यही है कि वे अपनी रूहानियत में इज़ाफ़ा करने की कोशिश करें। और रूहानियत में इज़ाफ़ा अपनी तवज्जुह मालिक या शब्द में जोड़ने से होता है लेकिन मालिक का दर्शन या शब्द से मेल हर किसी के वस की बात नहीं है इसलिये हर सत्संगी को चाहिये कि अपनी तवज्जुह बार बार अपनी सुरत की निशस्त के मुक़ाम पर लगावे यानी दिन में कई मर्तबा सुमिरन व ध्यान करे। ऐसा करने से उसकी रूहानियत में ज़रूर तरक़्क़ी होगी और उसका दिमाग़ शीतल, मन व इन्द्रियाँ ज़ेर और जिस्म तन्दुरुस्त रहेगा और नीज़ मालिक की दया हर वक़्त संग रहेगी और अगर तमाम संगत या कम से कम काफ़ी सत्संगियों की ऐसी हालत हो जावे तो ख़ुद हमारी संगत की, हमारी आयन्दा आने वाली नस्लों की और कुल हिन्दुस्तान की तरक़्क़ी या उन्नति का लुत्फ़ देखने में आवे।

बचन (२१)

सच्चा परमार्थी, चाहे उस पर कितना ही ज़ुल्म क्यों न हो, मालिक से हर किसी का भला ही चाहता है। वह किसी का बुरा करके ख़ुश नहीं होता। उसे दूसरों को दुखी

देख कर कष्ट होता है इसलिये जहाँ तक मुमकिन होता है हर किसी की सिफ़ारिश ही करता है और उसके दिल से हर किसी की बेहतरी ही के लिये दुआ निकलती है। दुनिया में जो भी जीव आता है उसका दामन अव्वल तो आगे ही आलूदा होता है वरना ज़िन्दगी के दौरान में ज़रूर कुछ न कुछ आलूदा हो जाता है इसलिये किस किस की बुराई की जावे? अलावा इसके बुराई करके सज़ा दिलवाने वाले तो बहुत हैं कोई सिफ़ारिश करके मुआफ़ी दिलवाने वाला भी होना चाहिये; नीज़ दूसरों के बुरे अंग ख़्याल में लाकर अपना चित्त क्यों मैला किया जावे? जब क्रोध, ईर्षा वग़ैरह अंगों का ज़रा भी हमारे मन पर ग़लबा होता है तो हमारा अन्तरी तार फ़ौरन् टूट जाता है और हम मालिक की याद के फ़ौरन् नाक़ाबिल हो जाते हैं और जब तक एक अर्सा झुरने व पछताने के बाद तार दोबारा जुड़ नहीं जाता हम बिल्कुल अन्धकार में झकोले खाते रहते हैं। सच्चा परमार्थी दूसरों की बुराइयों को ख़्याल में न लाने से इन सब झगड़ों से बचा रहता है।

वचन (२२)

बाज़ लोग ज़ोर देते हैं कि सत्संग सयासी तहरीक (राजनैतिक आन्दोलन) में शरीक हो मगर वे यह भूल जाते हैं कि सत्संग के ज़िम्मे ख़ुद अपना काम है और वह काम

सयासी तहरीक से ज़्यादा बड़ा और ज़्यादा मुफ़ीद है, क्योंकि सत्संग के ज़िम्मे जो काम है उसमें प्राणीमात्र की भलाई मुतसव्विर है। वाज़ै हो कि हुज़ूर राधास्वामी दयाल की संसार में तशरीफ़आवरी इस मक़सद से हुई कि जीवों को दुनिया के क्लेशों से छुटकारा पाने की राह बतलाई जावे और इसी मक़सद को पूरा करने के लिये सत्संग का वजूद क़ायम हुआ। चुनाँचे सत्संग के ज़िम्मे यही काम है कि आम जीवों तक राधास्वामी दयाल का संदेश पहुँचाया जावे और जो जीव ख़्वाहिशमन्द हों उन्हें राधास्वामी दयाल का उपदेश जानने और उससे फ़ायदा उठाने का मौक़ा दिया जावे। इस काम को छोड़कर सत्संग किसी दूसरे काम में नहीं लग सकता। बरख़िलाफ़ इसके जीवों को चाहिये कि दूसरे काम छोड़कर सत्संग की इस मुबारिक सेवा में शरीक हों। हुज़ूर राधास्वामी दयाल का बचन है:—

जीव चितावन आये राधास्वामी। बार बार तिन करूँ प्रनामी ॥१॥
आरत उनकी करूँ सजाई। चित्त शुद्ध कर थाल बनाई ॥२॥
अब जीवों को चहिये ऐसा। चलकर अरपें तन मन सीसा ॥३॥
जोति जगावें प्रथम बिरह की। बाती जोड़ें बिर्त लगन की ॥४॥
जब आरत अस लई संजोई। सतगुरु दया दृष्टि कर जोई ॥५॥

इस बचन से साफ़ ज़ाहिर है कि इस वक़्त जीवों का कर्तव्य यह है कि हुज़ूर राधास्वामी दयाल के चरणों में अपना तन मन व आपा भेंट करें और उनकी दयादृष्टि

हासिल करें । जो लोग इस वचन के अनुसार अपना तन मन व आपा उनके चरणों में अर्पण कर चुके हैं वे कैसे किसी ऐसे काम में, जिसके साथ राधास्वामी दयाल का तअल्लुक़ न हो, अपने तईं लगा सकते हैं ?

बचन (२३)

सत्संगियों को मरने से क़तई घबराना नहीं चाहिये। घबरावे वह जिसे यह शुबहा हो कि मरने के बाद आयन्दा ज़िन्दगी रहेगी या नहीं और अगर रहेगी तो न मालूम किस योनि में जाना पड़े और क्या क्या दुख व क्लेश सहने पड़ें। बरखिलाफ़ इसके जब कि सत्संगी को विश्वास है कि सुरत अमर है और सुरत-शब्द अभ्यास करने से या नेकचलनी की ज़िन्दगी बसर करने व सच्चे दिल से मालिक के चरणों में प्रेम व प्रीति बढ़ाने से आयन्दा जन्म ज़रूर अब से बेहतर होगा और अन्त समय में ज़रूर गुरु महाराज सहाई होंगे तो फिर उसके लिये घबराने का कोई मौक़ा नहीं रह जाता।

इन्सान को घबराहट राग व द्वेष की वजह से होती है। ज़िन्दगी के ज़माने में इन्सान अनेक चीज़ों व जीवों से मुहब्बत या नफ़रत पैदा कर लेता है और कूच करते वक़्त मुहब्बत व नफ़रत के ख़्यालात ग़लबा पाकर मरने वाले को परेशान करते हैं। अगर हम चाहते हैं कि मरने के बाद हमारी सुरत सीधी मालिक के चरणों में पहुँचे तो हम पर

फ़र्ज़ हो जाता है कि ज़िन्दगी में हम एहतियात से वरतें और याद रक्खें कि जिस माद्दी शै या जिस्म के साथ हम मोह पैदा करेंगे वह मौक़ा मिलने पर ज़रूर हमको अपनी जानिब खींचेगा और चूँकि वह माद्दी है इसलिये हमारी सुरत को माद्दे के साथ तअल्लुक़ क़ायम करना पड़ेगा यानी माद्दी दुनिया में जन्म लेना पड़ेगा, जिसका नतीजा यह होगा कि हमारी चाल का रुख़ सच्चे मालिक के चरणों के वजाय माद्दी दुनिया की तरफ़ रहेगा। इसलिये अक़्लमन्दी इसी में है कि हम ज़िन्दगी के दौरान में सँभल कर वरताव करें यानी अपने सब काम काज करें, किसी से झगड़ा या विगाड़ न करें और हर एक की यथा-योग्य इज़्ज़त करें लेकिन अपना चित्त अपने परम पिता के चरणों में जोड़े रहें।

बचन (२४)

सवाल—जब कि तजरुबे से मालूम है कि अनधिकारी लोग संगतों में शरीक होकर उनका तहस नहस कर देते हैं तो सत्संग में लोगों के दाख़िले का दरवाज़ा तंग क्यों नहीं कर दिया जाता ?

जवाब—अगर लोगों के क़सूरों की तरफ़ देखा जावे तो मुश्किल से कोई बिरला ही सच्चे परमार्थ का अधिकारी निकलेगा। अब जब कि, बाद मुद्दतदराज़, हज़ूर राधा-

स्वामी दयाल ने उद्धार का रास्ता खोलने की मौज फ़र्माई है तो हमारी प्रार्थना यह होनी चाहिये कि रास्ता ख़ूब चौड़ा किया जावे ताकि सभी तड़पती आत्माओं को अपनी दिली आरज़ू पूरी करने का मौक़ा मिले। इसके अलावा याद रखना चाहिये कि अधिकार परखने के लिये सत्संग में दुनिया के से क़ायदे इस्तेमाल नहीं किये जाते। मसलन् न किसी की अमीरी व ग़रीबी पर निगाह होती है, न किसी की विद्या पर, न किसी की जिस्मानी तन्दुरुस्ती व ख़ूबसूरती का लिहाज़ किया जाता है, न किसी के ख़ान्दान की बुज़ुर्गी का। अगर देखा जाता है तो यह आया उम्मीदवार के दिल में मालिक के प्रेम की चिनगारी मौजूद है या नहीं। अगर किसी के दिल में यह चिनगारी मौजूद है तो वह अधिकारी समझा जाता है क्योंकि मालिक के चरणों का प्रेम सब गुणों का भंडार है।

वचन (२५)

गुरु व शिष्य का सम्बन्ध समझने में अक्सर लोगों को भूल व भ्रम पैदा होते हैं हालाँकि बात साफ़ है। गुरु रास्ता दिखलाने वाला है और शिष्य रास्ता चलने वाला है, गुरु सहारा देता है और शिष्य अपना ज़ोर लगाता है। इसपर सवाल होता है कि यह जो कहा जाता है कि गुरु की मेहर ही से सब कुछ हो सकता है कहाँ तक दुरुस्त है?

इसका जवाव यह है कि भक्तिमार्ग में पहली सीढ़ी अपना आपा तजना है। वग़ैर आपे या अहंकार का त्याग किये शिष्य साधन करने या अन्तरी चाल चलने के क़तई नाक़ाविल रहता है और जव किसी ने आपा त्याग दिया तो उसके लिये "मैं" नहीं रहती है, इसलिये जव ऐसे शिष्य को साधन में कामयावी होती है तो क़ुदरतन् वह इस कामयावी को गुरु महाराज की मेहर से मन्सूव करता है। उसको कर्त्ता धर्त्ता गुरु महाराज ही नज़र आते हैं—

जव हम थे तव गुरु नहीं, अव गुरु हैं हम नांहिं।
प्रेमगली अति साँकरी, ता में दो न समाहिं।

वेचारा शिष्य क्या करे? जो कुछ और जैसा कुछ उसे दरसता है वही और वैसा ही वह वयान करता है, पर इसके यह मानी नहीं हैं कि शिष्य महज़ ख़्वावेग़फ़लत में मदहोश रहता है और गुरु महाराज उसे कामयावी वख़्श देते हैं। राधास्वामीमत यह सिखलाता है कि करनी और दया दोनों संग संग चलती हैं। यह ज़रूर है कि गुरु महाराज अगर चाहें तो अपनी रूहानी ताक़त के वल से शिष्य को आला रूहानी तजरुवात दिखला दें—जैसा कि कृष्ण महाराज ने अर्जुन को विराट्स्वरूप का दर्शन कराया—लेकिन शिष्य इस हालत में ठहर नहीं सकता। अपने हाथ पाँव मारने यानी साधन करने ही से अधिकार आता है और अधिकार के वग़ैर ठहराव नामुमकिन है। यही वजह है कि विराट्

स्वरूप का दर्शन होने पर अर्जुन घबरा गया और वह दर्शन बरदाश्त न कर सका। अगर अर्जुन में अधिकार होता तो वह न सिर्फ़ उस हालत को बरदाश्त करता बल्कि आगे क़दम बढ़ाने के लिये शौक़ दिखलाता। लेकिन बर्ख़िलाफ़ इसके वह घबराकर पुकारने लगा कि यह दर्शन हटाओ और पुराना वही मनुष्य-स्वरूप प्रकट करो। इसके अलावा राधास्वामीमत बतलाता है कि चूँकि नादान शिष्य गुरुगति यकदम समझने के नाक़ाबिल है इसलिये शुरू में वह गुरू को सिर्फ़ अपना बड़ा भाई तसलीम करे और आयन्दा ज्यों ज्यों वह अपनी बुज़ुर्गी व बड़ाई के तजरुबे दिखलावें, अपना भाव बदलता जावे। दूसरे लफ़्ज़ों में शिष्य का भाव या अक़ीदा उसके तजरुबात की बुनियाद पर क़ायम होना चाहिये और चूँकि शुरू में शिष्य सिर्फ़ इस क़दर जानता है कि गुरु महाराज उस विद्या को, जिसे वह अब पढ़ने लगा है, पहले से जानते हैं, इसलिये वह उन्हें अपना बड़ा भाई तसव्वुर करे।

बचन (२६)

सतगुरु की महिमा जिसक़दर बयान की जावे कम है और सतगुरु की ज़रूरत पर जिसक़दर ज़ोर दिया जावे नाकाफ़ी है। असल बात यह है कि जब तक ख़ुद किसी को गुरू के समान गति प्राप्त नहीं हो जाती उसको गुरू की

ज़रूरत रहती है क्योंकि न मालूम उसका मन कब बिगड़ जाय या कब क्या मुश्किल सामने आजाय। यह दुरुस्त है कि पूर्ण गति प्राप्त होने पर इन्सान को सच्ची बेफ़िक्री और सच्ची ख़ुशी प्राप्त हो जाती है लेकिन पूर्ण गति प्राप्त होने के लिये समय व परिश्रम की ज़रूरत है इसलिये साधारण जीव का गुज़ारा सिर्फ़ ऐसे ही हो सकता है कि उसे किसी पूर्ण गति वाले पुरुष की शरण मिलजाय। ऐसे पुरुष की शरण प्राप्त होने पर वह निश्चिन्त हो जाता है। यही वजह है कि आमतौर पर सत्संगी बावजूद पूर्ण गति प्राप्त न होने के शान्त व मगन नज़र आते हैं।

वचन (२७)

जब तक किसी सत्संगी के अन्दर ज़ब्त यानी मन को क़ाबू में रखने का माद्दा पैदा नहीं होता वह सत्संग से असली फ़ायदा नहीं उठा सकता। सत्संगी के लिये यह काफ़ी नहीं है कि मन को क़ाबू में रखने से जो लाभ होते हैं उनमें श्रद्धा क़ायम करले या मन को क़ाबू में लाने का इरादा करले। उसको चाहिये कि नीचे लिखे हुए तरीक़ों से मन को क़ाबू में रखने की आदत डाले:—

अव्वल—जब चलने फिरने व काम काज करने से ख़ूब भूक लग जाय तो खाने के लिये बैठे और जब खाना सामने आवे तो परहेज़ करे यानी बिला खाये उठ जाय।

दोयम्—तेज़ प्यास लगने पर ठंडा पानी या शरबत मँगाये लेकिन उनके सामने आने पर प्यासा रहना मंज़ूर करे।

इन दो परीक्षाओं में पास होने पर आदत डाले कि निन्दा होने पर मिज़ाज क़ाबू में रहे और स्तुति होने पर मन फूलने न पावे।

सत्संग में असाधारण दया होने पर तबिअत साव-धान रहे। अन्तर में कोई परचा मिलने पर उसका ज़िक्र ज़बान पर न आवे और अन्तर में दर्शन की गहरी दया होने पर ऐसे बरते कि पड़ोसी तक को ख़बर न होने पावे कि कोई ग़ैरमामूली बख़्शिश हुई है। इन सात परीक्षाओं में पूरा उतर आने पर सत्संगी इतमीनान के साथ ज़िन्दगी बसर कर सकता है।

बचन (२८)

हर सोसायटी को चार प्रकार के लोगों से वास्ता पड़ता है:—

अव्वल ऐसे लोगों से, जो सोसायटी से अपने गुज़ारे के लिये रुपया पैसा या दूसरी चीज़ों की मदद लेते हैं लेकिन तन तोड़कर काम करते हैं और दिल व जान से सोसायटी की उन्नति के लिये कोशिश करते हैं। ये सोसा-यटी के नमक-हलाल मेम्बर हैं। दोयम् ऐसे लोगों से, जो

सोसायटी से इमदाद मिलने या न मिलने की क़तई परवा नहीं करते लेकिन सोसायटी की उन्नति के लिये अपना तन मन धन बेदरेग़ सर्फ़ करते हैं। ये सच्चे देशभक्त या क़ौमपरस्त हैं। सोयम् ऐसे लोगों से, जो सोसायटी से हर क़िस्म का फ़ायदा उठाते हैं लेकिन उनकी दृष्टि हमेशा दूसरे मेम्बरों के दोषों ही पर पड़ती है और वे सोसायटी का हमेशा बुरा ही चाहते हैं, ये नमकहराम मेम्बर हैं। और चहारुम् उन लोगों से, जो देश के शत्रु या क़ौम के दुश्मन होते हैं और इन्हीं नामों से पुकारे जाते हैं।

जिस सोसायटी के अन्दर अव्वल व दोयम् क़िस्म के मेम्बर काफ़ी तादाद में होते हैं वह सोसायटी सदा सुखी रहती है, जिसमें अव्वल क़िस्म के काफ़ी, दोयम् क़िस्म के काफ़ी से ज़्यादा और सोयम् व चहारुम् क़िस्म के कम मेम्बर होते हैं वह सोसायटी दिन दुगुनी व रात चौगुनी तरक़्क़ी करती है और जिस सोसायटी में तीसरी व चौथी क़िस्म के मेम्बर ज़्यादा तादाद में हो जाते हैं वह आज नहीं तो कल नष्ट हो जायगी।

बचन (२६)

वैज्ञानिक स्थूल प्रकृति के परमाणुओं से टक्कर मार कर उनके अन्दर गुप्त शक्ति को प्रकट किया चाहते हैं लेकिन मनुष्य के अन्दर तीन परमाणु हैं—एक स्थूल प्रकृति का,

दूसरा मन के मसाले का और तीसरा चेतन जौहर का। स्थूल प्रकृति के परमाणुओं से कहीं ज़्यादा शक्ति मन के परमाणुओं में और मन के परमाणुओं से बदर्जहा ज़्यादा चेतन जौहर के परमाणुओं के अन्दर है। राधास्वामी-मत में चेतन परमाणु यानी सुरत की शक्ति को प्रकट करने का साधन बतलाया जाता है। इससे समझ में आ सकता है कि सत्संगियों और वैज्ञानिकों के लक्ष्यों में क्या फ़र्क़ है।

बचन (३०)

नाम के सुमिरन का सिर्फ़ यह मतलब नहीं है कि किसी पवित्र नाम का महज़ ज़बान से उच्चारण किया जावे। सन्त फ़रमाते हैं कि नाम का सुमिरन सुरत की ज़बान से करना चाहिये। सुरत की ज़बान से मुराद सुरत की उच्चारण शक्ति से है और वह तवज्जुह है। किसी अन्तरी स्थान पर मुनासिब तरीक़े से किसी पवित्र नाम का सुरत की ज़बान से सुमिरन करने का नतीजा यह होता है कि अभ्यासी के अन्दर रफ़्ता रफ़्ता उस अन्तरी मुक़ाम की गुप्त शक्ति प्रकट हो जाती है और ऐसा होने पर उसको उस शक्ति के धनी या देवता का दर्शन प्राप्त होता है। इसी हालत को मंत्रसिद्धि कहते हैं और होते होते ऐसी हालत हो जाती है कि जैसे ज्वार आने पर समुद्र का पानी पास के दरियाओं में चढ़ जाता है और भाटा आने पर उन दरियाओं का पानी समुद्र में भर जाता है ऐसे ही अभ्यासी की

शक्ति उस धनी में और धनी की शक्ति उस अभ्यासी में आने जाने लगती है। इस उसूल के बमूजिब अगर दिमाग़ के अन्दर वाक़ै सबसे ऊँचे अन्तरी स्थान की गुप्त शक्ति जागृत करली जावे तो इन्सान जीते जी सच्चे कुल मालिक के साथ वस्ल हासिल कर सकता है।

बचन (३१)

चाहे कोई जंगल में जाकर दिन काटे या दुनिया में पिलकर उमर गुज़ारे मुश्किलें और तकलीफ़ें इन्सान का हर्गिज़ पीछा न छोड़ेंगी। बाज़ लोग मुश्किलों व मुसीबतों से बचने या उनसे जो दुख होता है उसे भुलाने के लिये नशे की चीज़ों का इस्तेमाल करते हैं; बाज़ जूआ चोरी करके दौलत कमाने और दौलत के ज़रिए दुखों से बचने की सोचते हैं ग़र्ज़ इसी तरह इन्सान अनेक पाप कर्म करता है जिनसे महज़ थोड़ी देर के लिये सहूलियत की सूरत निकल आती है। सत्संगियों को जानना चाहिये कि दुनिया के दुखों व क्लेशों से पूरा छुटकारा तो मालिक के चरणों में विश्राम मिलने या मन को जीत लेने ही से मिल सकता है। लेकिन जब तक ऐसी क़िस्मत जागे अगर तमाम संगत एक मुश्तरका ख़ान्दान के मेम्बरों की तरह मिलजुल कर गुज़ारा करे तो छोटे बड़े सभी औसत दर्जे के सुख के साथ ज़िन्दगी बसर कर सकते हैं।

बचन (३२)

लोग पूछते हैं राधास्वामी-मत के उपदेश के अनुसार मालिक की भजन वन्दगी का क्या उद्देश्य है ? वाज़े हो कि संसार में सभी लोग एक ही उद्देश्य लेकर मालिक की भजन वन्दगी नहीं करते। जैसा जिसका स्वभाव है, जैसे जिसके भाव हैं और जैसी जिसकी तबिअत है वैसा ही उसका उद्देश्य रहता है मसलन् जो लोग धनी यानी बढ़ के अमीर होते हैं उनकी आदत आमतौर पर हँसी दिल्लगी की होती है। वह हर काम अपना दिल बहलाने के लिये करते हैं इसलिये तअज्जुब नहीं, अगर ये लोग भजन वन्दगी भी महज़ दिलबहलाव के लिये करते हों। इसी तरह वे लोग, जो अमीर नहीं हैं लेकिन खाते पीते हैं और ज़्यादा अमीर होने की चाह रखते हैं और अपनी चाह पूरी करने के लिये कोई रोज़गार या सौदागरी करते हैं, अपना भजन वन्दगी भी इसी ग़रज़ से करते हैं और मालिक से सौदा करते हैं कि अगर उनकी फ़ुलाँ ग़रज़ पूरी हो जाय तो फ़ुलाँ ख़ैरात का काम करेंगे, धर्मशाला बनवायेंगे या मसजिद व तालाब तामीर करायेंगे। इनके अलावा बहुत से ऐसे लोग हैं जो ग़रीब व हाजतमन्द हैं। उनकी तमाम ज़िन्दगी हाय हाय करने, भीख माँगने या इधर उधर की कतर ब्योंत में गुज़रती है। इसलिये नामुमकिन नहीं है कि ये लोग भजन वन्दगी के वक़्त अपने दुख रोते हों और सैकड़ों मुरादें माँगते हों या

इधर उधर की तजवीज़ें पेश करते हों, मगर मालूम हो कि ये तीनों क़िस्म के लोग राधास्वामीमत के भजन वन्दगी के उद्देश्य से कोसों दूर हैं। राधास्वामीमत में भजन वन्दगी का मतलब सच्चे मालिक के निकट होना या उससे वस्ल हासिल करना है। संसार के क़िस्से या क़ज़िये पेश करना या धन सम्पत्ति प्राप्त होने पर मत्था टेकना व शुकराने बजा लाना भजन वन्दगी नहीं है। सुमिरन, ध्यान, भजन, सेवा व सत्संग प्रेमीजन को मालिक से वस्ल के लायक़ बनाने के साधन हैं। सच्चे मालिक के साथ वस्ल हासिल करने के लिये न सिर्फ़ परम पवित्रता की ज़रूरत है बल्कि उस शक्ति के जगाने की भी ज़रूरत है जिससे सच्चे मालिक के विशाल स्वरूप का दर्शन हो सकता है। राधास्वामी-मत के साधन इन दोनों मरहलों में बड़ी मदद देते हैं।

जिस वक़्त किसी प्रेमीजन का हृदय संसारी वासनाओं से साफ़ हुआ और उसके अन्तर में प्रेम-अग्नि ने ज़ोर पकड़ा वही वक़्त दर्शन मिलने की घड़ी के आने का है। मौलाना रूमी कहते हैं:—

"चूँ बिनालद ज़ार बे शुकरो गिला।
उफ़्तद अन्दर हफ़्त गरदूँ ग़लग़ला॥"

यानी जब प्रेमीजन किसी मुआमले की निस्बत शुकराने या शिकायत के ख़्यालात दिल में न रखते हुए (बल्कि

ख़ालिस प्रेमवस) ज़ार ज़ार रोता है तो सातों आसमानों के अन्दर हलचल मच जाती है। ग़ौर का मुक़ाम है कि जब मुगदर व मोगरियों का बाक़ायदा सेवन करने से हमारे बदन में आप से आप ताक़त आ जाती है हालाँकि ये चीज़ें बिल्कुल बेजान हैं और अपनी तरफ़ से हमारी कुछ मदद नहीं कर सकतीं और ऐसे ही पत्थर या धातु की मूर्ति में ठीक तरह से निश्चय क़ायम करके उसकी सेवा व भक्ति करने से इन्सान के दिल में उत्तम भाव पैदा हो जाते हैं हालाँकि मूर्ति की तरफ़ से किसी तरह की इमदाद नहीं मिलती तो फिर अगर जीते जागते सच्चे मालिक की, जो परम सत्ता, परम चेतनता, परम आनन्द व परम प्रकाश का भंडार है, ठीक तरीक़े से भक्ति या बन्दगी की जावे तो कैसे मुमकिन है कि इन्सान के अन्दर कुछ न कुछ तब्दीली व तरक़्क़ी ज़ाहिर न हो? राधास्वामीमत बतलाता है कि जैसे किसी गर्म वस्तु (शै) के स्पर्श करने से हमारे बदन में उसकी गर्मी आ जाती है ऐसे ही सच्चे मालिक से स्पर्श होने पर हमारे अन्दर सत्ता, चेतनता, आनन्द व प्रकाश का स्रोत खुल जाता है। यही सच्चे भजन बन्दगी का उद्देश्य है।

बचन (३३)

राधास्वामी दयाल की चरणशरण इख़्तियार कर लेने पर हर जीव को बहुत से फ़ायदे हासिल होते हैं, मसलन् उसका

हक़ हो जाता है कि राधास्वामी दयाल उसकी हर हालत में रक्षा व सहायता फ़र्मावें, अन्त समय पर उसकी सुरत की सँभाल हो, उसको आयन्दा जन्म बेहतर मिले, उसके उद्धार यानी कल्याण का सिलसिला जारी हो, उसे एक दिन सच्चा मोक्ष प्राप्त हो, उसको बिला कुछ खर्च किये या हाथ पाँव हिलाये राधास्वामी-सत्संग के सब इन्तिज़ामों का फ़ायदा मिले और सब सत्संगी उसको दिलोजान से अपनी बिरादरी में शरीक करें, उसकी सुरत की धार के उतार में कमी हो, उसकी सुरत की धार एकत्र होने लगे और उसका रुख़ अन्तर्मुख हो, उसे रफ़्ता रफ़्ता अन्तर में चेतन घाट के ऐसे तजरुबे हासिल हों जिनके मुक़ाबिले दुनिया के सभी भोगरस एकदम फीके हैं और जिनके प्राप्त होने पर उसके हृदय से सब विकार, सब संशय और सब भ्रम दूर हो कर उसे जीते जी सच्ची शान्ति हासिल हो।

बचन (३४)

चूँकि इन्सान कमज़ोर है इसलिये अगर उससे क़ुसूर बन पड़ें तो कोई तअज्जुब नहीं लेकिन जो शख़्स अपने क़ुसूर को क़ुसूर न माने वह सख़्त ग़लती करता है और जो मुआफ़ी मिल जाने की उम्मीद पर बेधड़क क़ुसूर पर क़ुसूर करता है वह उससे भी बढ़कर बेवक़ूफ़ी करता है। अलबत्ता जो शख़्स अपनी तरफ़ से बच कर चलता है और

कमज़ोरी या बेवक़ूफ़ी की वजह से जब तब गिर जाता है लेकिन फिर ख़बरदार हो कर खड़ा हो जाता है और सच्चे दिल से झुरता पछताता हुआ मुआफ़ी का ख़्वास्तगार होता है और आयन्दा ज़्यादा एहतियात से क़दम बढ़ाता है उसको अपने पिछले क़ुसूरों की ज़्यादा फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं। मालिक के नियम बदला लेने वाले नहीं हैं बल्कि दुरुस्ती कराने वाले हैं—इसलिये दुरुस्ती हो जाने पर इन्सान का गुज़िश्ता क़ुसूरों के लिये मुआफ़ी की उम्मीद बाँधनी निहायत जायज़ व दुरुस्त है।

वचन (३५)

सवाल सत्संगी का—क्या सत्संग में पाठ करने वालों को पाठ सुनने वालों के मुक़ाबिले कोई ख़ास लाभ प्राप्त होता है ? अगर होता है तो क्या ?

जवाब—अगर वे प्रेम से पाठ करते हैं तो उन्हें पाठ के वक़्त सुस्ती व नींद का ग़लबा नहीं होने पाता और उनका मन शब्दों के मज़मून व अन्तरी ध्यान का पूरा रस लेता है लेकिन अगर कोई शख़्स अपना पाठ सुनाने का शौक़ीन है और इसी लिये पाठ करता है कि सुनने वाले उसके पाठ की तारीफ़ करें तो वह उन पाठ सुनने वालों के मुक़ाबिले घाटे में रहता है जो अन्तर में सुरत जोड़कर पाठ का रस लेते हैं।

बचन (३६)

विद्याओं का पढ़ना मना नहीं है वल्कि विद्याओं से ज़रूर काम लेना चाहिये लेकिन ऐसा न हो कि विद्याओं के चमत्कारों में उलझकर परमार्थ विसार दिया जावे। याद रखना चाहिये कि संसार भर में हमारी सुरत या आत्मा से बढ़कर उत्तम कोई पदार्थ नहीं है और आत्मा व मन में भेद है। मनुष्य के अन्दर सोचने व विचारने वाला आत्मा नहीं है, यह मन या जीवात्मा है। हमारा आत्मा सत् चित् आनन्द या प्रेम स्वरूप है। यह ममुष्य-जीवन इसलिये मिला है कि मन के घाट के वजाय सुरत का घाट जगाया जावे। ऐसा करने से मनुष्य को वह गति प्राप्त होगी जिसके सामने लौकिक विद्याओं के सारे चमत्कार तुच्छ हैं। इस वक्त़ सुरत यानी आत्मा पर मन व शरीर के ग़िलाफ़ चढ़े हैं। सुरत का घाट जगने पर ये पर्दे फट जाते हैं और सुरत सत् चित् आनन्द रूप पूर्ण स्वतंत्र होकर अपने निज अंगों में वरतती है। इस अवस्था में न सुरत को कोई बीमारी सताती है कि चिकित्साविद्या की सहायता की ज़रूरत हो, न अन्धकार दिक़ करता है कि विज्ञान से सहायता माँगी जावे और न किसी क़िस्म की इच्छा या कमी रहती है कि दूसरी विद्याओं के ग्रन्थों का अवलोकन किया जावे। इसलिये विद्याओं को उनके लायक़ जगह दो मगर अपने सिर पर ऐसा सवार न करो कि अपने निज

आपे की सुधि न रहे और तमाम उम्र विद्याओं के चमत्कार देखने में ही गुज़र जाय और अन्त में नीचे घाट पर उतरना पड़े।

वचन (३७)

जब किसी जीव पर मालिक ख़ास दया फ़र्माता है तो अव्वल उसके दिल में सच्चे परमार्थ की चाह पैदा करता है फिर उसे सच्चे परमार्थी संयोग में पहुँचा देता है ताकि वह मुनासिब साधन सीख सके। इसके बाद उसे साधन की कमाई में मदद देकर उसके अन्दर अधिकार बढ़ाता है और अन्तरी तजरुबे बख़्शकर आगे बढ़ने के लिये उमंग पैदा करता है और उसका विश्वास दृढ़ कराता है। फिर अपने दर्शन की झलक दिखला कर उसके बन्धनों व कर्मों की मैल साफ़ करता है और आख़ीर में उसे पूरा अधिकारी बनाकर अपने चरणों में मुस्तक़िल निवास देता है। हर सत्संगी को चाहिये कि अपनी हालत पर दृष्टि डाल कर परखे कि वह इस वक़्त किस दर्जे में है।

वचन (३८)

जब सत्संगी अपनी तरफ़ देखता है तो अपने तईं मालिक की सेवा के क़तई नाक़ाबिल पाता है और उसे ख़्याल होता है कि लोहे के एक बदहैसियत टुकड़े से

ज़्यादा उसको हैसियत नहीं है लेकिन उसे याद रखना चाहिये कि अगर लोहे का बदहैसियत टुकड़ा गढ़ कर सुआ बना दिया जावे तो हज़ारों बोरे सी सकता है और अगर वह खुरपे में तब्दील कर दिया जावे तो सैकड़ों एकड़ ज़मीन की घास छील कर उसे इन्सानों के बसने के लायक़ बना सकता है। यह माना कि सत्संगी बेहक़ीक़त हैं लेकिन जबकि राधास्वामी दयाल ने उन्हें अपना औज़ार बनाकर इस्तेमाल करना मंज़ूर फ़र्मा लिया है तो उन्हें दिल के बिठला देने वाले ख़्यालात अपने नज़दीक तक नहीं आने देने चाहियें। उनकी हालत देखकर लोग हँसी भी करेंगे, दुश्मनी भी करेंगे और तारीफ़ भी करेंगे लेकिन उन्हें याद रखना चाहिये कि जो लोग उनकी बदनामी सुनकर आवेंगे, उन्हें संसार में सुखी और परमार्थ की दौलत से मालामाल पाकर नेकनामी करते हुए लौटेंगे। दुनिया में हर नई जमाअत की कुछ अर्से ऐसे ही चाल चला करती है लेकिन समझ आनेपर दुनिया टूटने लगती है। हमें नेकनामी व बदनामी के ख़्यालात एक तरफ़ रख देने चाहियें और अपने धर्म और उसके पालन से प्रकट होने वाले ज़बरदस्त नतीजों को ध्यान में रखकर काम करना चाहिये। इससे बढ़ कर किसी की क्या ख़ुश-क़िस्मती हो सकती है कि उसे मालिक इसलिये चुन ले कि उसका तन, मन व धन अपनी सेवा में ख़र्च करावे

और उससे अपनी मौज के मुतअल्लिक़ सेवा ले और दुनिया के दुःखों व क्लेशों से आज़ाद करके उसे संसार में सुख व प्रेम का राज्य क़ायम कराने का औज़ार बनावे।

वचन (३६)

मामूली इन्सान के लिये निराकार की उपासना निहायत मुश्किल बल्कि नामुमकिन है। जिस वस्तु का ज्ञान न हो उसका ध्यान या सही अनुमान कोई कैसे कर सकता है ? फिर निराकार मालिक का ध्यान करना और भी मुश्किल होना चाहिये। मालिक को आकाश की तरह व्यापक और सूर्य की तरह चमकीला कह कर उपासना करने से मन में भाव तो पैदा हो जाता है लेकिन ध्यान क़ायम नहीं हो सकता।

वचन (४०)

पतंजलि के योगसूत्रों में यमों व नियमों का बयान है:—

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य्य और अपरिग्रह ये पाँच यम हैं और तप, शौच, सन्तोष, स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान ये पाँच नियम हैं। अहिंसा के अर्थ दूसरों के शरीर को दुःख न देना हैं, सत्य के अर्थ झूठ बोल कर

दूसरों के मन को दुख न देना, अस्तेय के अर्थ दूसरों का धन न चुराना और अपरिग्रह के अर्थ दूसरों के धन पर बुरी निगाह न रखना हैं। ऐसे ही तप के अर्थ अपने शरीर को बस में करना, शौच के अर्थ अपने शरीर को साफ़ सुथरा रखना, सन्तोष के अर्थ अपने मन को वस में रखना, स्वाध्याय के अर्थ पवित्र नाम या पवित्र ग्रन्थों का अध्ययन करके मन को शुद्ध करना और ईश्वरप्रणिधान के अर्थ मन को मालिक में लीन कर देना यानी मालिक से गहरा प्रेम करना है। राधास्वामीमत में यह गिनती गिनवाने के बजाय दो शब्दों में बतला दिया जाता है कि शौक़ीन परमार्थी को अव्वल अपना शरीर व मन वस में रखने का अभ्यास करना चाहिये यानी यह हालत पैदा करनी चाहिये कि जब जिधर चाहा अपना शरीर व मन लगा दिया और ऐसा न हो कि संसार के सामान सम्मुख आने पर जिधर चाहे मन चला जावे या शरीर मुख़ातिब हो जाय और दोयम् मालिक के चरणों में ऐसा प्रेम जगाना चाहिये कि मालिक के समान उसे कोई प्यारा न लगे। इन दो बातों का लिहाज़ रखने से सारे यमों व नियमों का पालन हो जाता है।

बचन (४१)

जो लोग संसार की वर्तमान दुःख व क्लेश की हालतें देख कर मालिक की सत्ता या दयालुता, समर्थता व

बुद्धिमत्ता की निस्बत शक लाते हैं वे सख़्त ग़लती पर हैं। मालूम होवे कि यह पृथ्वी कुल रचना नहीं है। किसी इंजीनियर की बनाई हुई कुल इमारत को न देखना और इमारत के अन्दर सिर्फ़ जायज़रूर देख कर इंजीनियिर की दानिशमन्दी में शुबहा लाना नामुनासिब है। जायज़रूर के अन्दर से जो बू आती है वह इंजीनियर का दोष नहीं है बल्कि मकान का इस्तेमाल करने वालों की करतूत का नतीजा है। ऐसे ही संसार के अन्दर वर्तमान कष्ट व क्लेश ज़्यादातर ख़ुद इन्सान के पैदा किये हुए हैं। मालिक ने उसके लिये सोना, चाँदी, हीरे, जवाहिरात, गाय, बैल, हाथी, घोड़े, फूल, फल, अनाज, दूध वग़ैरह सामान पैदा किये और मिट्टी, पानी, हवा वग़ैरह के अटूट भंडार मुहय्या किये लेकिन उसने लोभवस ज़मीन पानी व हवा की तक़सीम कर ली और एक दूसरे का गला काटने के लिये क़ायदे व इन्तिज़ाम क़ायम किये जिसका नतीजा वर्त्तमान दुःख व क्लेश हैं। ख़ुद नामुनासिब काररवाइयाँ करनी और दोष मालिक में निकालना कहाँ की अक़्लमन्दी है?

सवाल हो सकता है कि आख़िर ये दुःख व क्लेश मुमकिन कैसे हुए? वजह यह है कि पृथ्वीलोक निर्मल चेतन देश से निहायत दूर फ़ासिले पर वाक़े है। इसलिये यहाँ चेतनता या रूहानियत की कमी है और इसीलिये

यहाँ दुःख व क्लेश की सूरतों का प्रकट होना मुमकिन है लेकिन यह पृथ्वी कुल रचना के मुक़ाबिले एक तिल का दाना है। एक नाक़िस तिल के दाने की हालत मुलाहिज़ा करके कुल रचना को बुरा समझना और उसके रचने वाले परम पुरुष की निस्बत बुरे भाव चित्त में उठाना क़तई नाजायज़ है। अगर उस परम पुरुष यानी सच्चे मालिक में दोष होते तो परमाणु से लेकर सूर्य व नक्षत्रों तक की चाल में ऐसी बाक़ायदगी और सृष्टि नियमों के अन्दर ऐसी समानता कभी देखने में न आती।

बचन (४२)

सतगुरु साधारण मनुष्य भी होते हैं और असाधारण पुरुष भी। अगर कोई चाहता है कि उनकी ज़ात से पूरा फ़ायदा उठावे तो उसके लिये मुनासिब है कि उनके साथ पिता पुत्र का नाता क़ायम करे। लेकिन आम तौर पर इन्सान अपनी विद्या, इज़्ज़त व दौलत के अहंकार में आकर उनके साथ होशियारी दिखलाते हैं और नतीजा यह होता है कि तकलीफ़ उठाते हैं और उनकी दया से महरूम रहते हैं। पिता पुत्र के सम्बन्ध में प्रेमीजन सदा मुआफ़ी का उम्मेदवार रहता है और कभी निरासता व परेशानी उसके दिल में नहीं आती।

वचन (४३)

संसार के मुन्तज़िम और सभी सामान हमारी सुरत के भूखे हैं। सुरत चेतन है और संसार के सामान जड़ हैं। सुरतें संसार में शरीर धारण करती हैं और यहाँ के सामान व पदार्थ खाकर शरीर पालती हैं। अगर सुरतें अपनी चेतनता सर्फ़ करके शरीर न बनावें तो संसार का सभी मसाला मुन्तशिर हालत में पड़ा रहे और जो रौनक़ इस वक़्त संसार के मसाले को हासिल है फ़ौरन् ग़ायब हो जाय। इसलिये काल व माया, जो संसार के मुन्तज़िम हैं, संसार क़ायम रखने के लिये सुरतों को अपने क़ाबू में रक्खा चाहते हैं। सुरतें शरीर धारण करती हैं और पालती हैं। ये शरीर काल के हाथ से क़त्ल होते हैं और एक शरीर क़त्ल हो कर दूसरों की ज़्याफ़त में सर्फ़ होता है। रात दिन यही तमाशा जारी है। राधास्वामी नाम के अन्दर यह शक्ति है कि उसका बाक़ायदा उच्चारण करने से काल व माया और उनकी सब शक्तियाँ बेकार हो जाती हैं और सुरत उनकी गढ़ी हुई ज़ंजीरें तोड़ कर आकाश-मार्ग से चलकर अपने निजघर में प्रवेश कर जाती है जहाँ काल व माया का गुज़र नहीं है।

बचन (४४)

राधास्वामी दयाल ने दया करके सत्संगियों के लिये हर मुआमले को ऐसा साफ़ कर दिया है कि हैरत होती है। मसलन् दुनिया के दुःखों से अमान हासिल करने के लिये हुक्म है कि तुम मिलकर रहो। मिलकर रहने से हर क़िस्म के ग़ैरज़रूरी दुःखों से रक्षा रहेगी। यह ऐसी दवा है कि न इसका स्वराज्य मुक़ाबिला कर सके, न शख़्सी हुकूमत। मुक्ति हासिल करने के लिये फ़र्मान है कि तुम सतगुरु के चरणों की प्रीति पैदा करो क्योंकि जैसे लोहा किसी लकड़ी के टुकड़े के संग जुड़ कर सहज में तैरने लगता है ऐसे ही जीव भी सच्चे सतगुरु की शरण लेकर सहज में उनके संग संग तर जाता है। इसी तरह संसार का सुख हासिल करने के लिये बचन है कि तुम सबके सब मेहनत करने की आदत डालो और अपनी हक़ व हलाल की कमाई में गुज़र करने का पक्का इरादा करो। मेहनत करने वाले को किसी चीज़ की कमी न रहेगी, ख़ासकर जब कि तमाम संगत मिलकर इन्तिज़ाम व मेहनत करेगी। ये सब ऐसे आसान नुस्खे हैं कि न दवा घोटने की तकलीफ़ उठानी पड़ती है, न कड़वे प्याले पीने की ज़ेहमत, महज़ दवा सूँघने से मर्ज़ भाग जाते हैं।

वचन (४५)

बाज़ मुल्कों के वाशिन्दे निहायत आज़ाद तबअ हैं। उनकी आज़ादख़्याली व बेबाकी की दो वजूह हैं। एक यह कि उनके ख़्याल में उनका मुल्क किसी के मातहत नहीं, दूसरी यह कि वे जानते हैं कि क़ुदरत ने उन्हें सब कुछ दे रक्खा है और वे किसी के मोहताज नहीं। इन दोनों बातों का उनको बड़ा घमंड है और इसीलिये वे बेबाक व आज़ाद तबअ हैं लेकिन हमारी आरज़ू इस क़िस्म की आज़ादी के लिये नहीं है। हम ऐसी आज़ादी चाहते हैं जिसका कारण हुज़ूर राधास्वामी दयाल के चरणों का सच्चा विश्वास हो। ऐसी आज़ादी की पुश्त पर अहंकार के बजाय दीनता व नम्रता होगी। दूसरे मुल्क वालों के सिर पर ऐसा कोई नहीं है जिससे वे अपने तईं छोटा देखें और छोटा समझें इसलिये उनका दिल अहंकार से भरा रहता है। मगर जिसे मालिक की सच्ची प्रतीति है वह मालिक की समर्थता का ज्ञान होने से इधर तो बेख़ौफ़ और दूसरों से बेनियाज़ रहेगा और उधर मालिक को रक्षक व समर्थ देखता हुआ दीन अधीन रहेगा। यह दुरुस्त है कि यह हालत तभी मुमकिन होगी जब सत्संगियों को आमतौर अन्तरी दर्शन प्राप्त हों क्योंकि बिला अन्तरी दर्शन की प्राप्ति के विश्वास ढिल मिल रहता है लेकिन जबतक किसी सत्संगी के लिये ऐसी दया न हो तबतक

उसे चाहिये कि अपने मौजूदा विश्वास ही की बुनियाद पर बेफ़िक्री व आज़ादी के साथ ज़िन्दगी बसर करे और ग़रीबी व तंगदस्ती की हालत में भी अपने परम पिता की रच्चा व सहायता का आसरा चित्त में क़ायम रखकर सुख से रहे। इसपर कहा जासकता है कि इस हिदायत पर अमल करने के लिये भी अधिकार की ज़रूरत है, सो दुरुस्त है, लेकिन घबराने की कोई बात नहीं है, सत्संग-मण्डली का क़दम दया से दिन बदिन आगे बढ़ रहा है। मालिक की ख़ास दया प्राप्त होने के लिये हर किसी को तीन दर्जों से गुज़रना पड़ता है। अव्वल यह कि पिछले संस्कार उसपर ख़ास दया होने की इजाज़त दें, दोयम् यह कि उसके अन्दर ख़ास दया प्राप्त होने की चाह पैदा हो और सोयम् यह कि उसके अन्दर ख़ास दया लेने के लिये पात्रता या क़ाबिलियत पैदा हो। ये मंज़िलें तय कर लेने पर इन्सान मालिक की ख़ास दया हासिल करता है। दया से हमारी सँगत इस वक्त़ दूसरे दर्जे में है यानी हमारे पिछले संस्कार इजाज़त देते हैं कि हमारे ऊपर ख़ास दया हो और हमारे दिलों के अन्दर ख़ास दया की प्राप्ति के लिये चाह ज़ोर से काम कर रही है। अब कसर सिर्फ़ पात्र की है, जो तैयार हो रहा है। ज्योंही पात्र तैयार हुआ, ख़ास दया ज़रूर नाज़िल होगी और ज्योंही ख़ास दया प्राप्त हुई, अन्तरी दर्शन किसी न किसी दर्जे के आमतौर पर बख़्शिश होंगे।

बचन (४६)

जो जिस्म ज़िन्दा है उसके अन्दर नया मसाला जज़्ब करने और मुर्दा मसाला ख़ारिज करने का अमल दिन रात जारी रहता है और यह अमल बन्द होते ही उस शरीर का नाश होने लगता है। ज़िन्दा संगत का भी यही हाल है यानी उसकी मरकज़ी क़ुव्वत (केन्द्रिक शक्ति) इन्तिख़ाब का अमल जारी रखती है जिससे वे बातें जो उस संगत के लिये मुफ़ीद व ज़िन्दगीबख़्श हैं इसके मेम्बरों के अन्दर आती रहती हैं और नाक़िस या बेमसरफ़ बातें ख़ारिज होती रहती हैं। मगर बाज़ लोग बिला सोचे समझे हर नई बात को अपने अन्दर जज़्ब कर लेते हैं और हर पुरानी बात को, चाहे वह कितनी ही मुफ़ीद क्यों न हो, महज़ पुरानी होने की वजह से तर्क कर देते हैं। वे इस अमल से अपना दोहरा नुक़सान करते हैं। इसी तरह बाज़ लोग पुरानी बातों की, चाहे वे कैसी ही लग़्व क्यों न हों, ज़बरदस्त टेक रखते हैं और जब उन बातों के ख़ारिज होने का समय आता है वे बवजह पकड़ के उनके साथ ख़ुद भी संगत से ख़ारिज हो जाते हैं। चूँकि सत्संग भी एक ज़िन्दा संगत है और इसके अन्दर भी इन्तख़ाब का अमल जारी है इसलिये बेहतर होगा कि सब लोग आगाह रहें और नाक़िस या बेमसरफ़ बातों में पकड़ क़ायम करके अपने तईं मरदूद बनाये जाने के ख़तरे में न डालें।

वचन (४७)

यह दुरुस्त है कि भीड़ भाड़ के मौक़ों पर हज़ारों सत्संगियों का मिलकर उठना बैठना व खाना पीना एक ख़ास लुत्फ़ रखता है लेकिन दूर फ़ासले से चलकर आने और रास्ते की मुश्किलें झेलने और भारी रक़में किराये वग़ैरह में ख़र्च करने का अगर इतना ही फल मिले तो नाकाफ़ी है। मुनासिब यह है कि सत्संग से लौटते वक़्त हर एक प्रेमी सत्संगी यह महसूस करे कि वह कोई ख़ास चीज़ लेकर लौट रहा है। जिसके दिल में प्रेम की चिनगी न हो वह चिनगी हासिल करे, जिसके दिल में चिनगी हो लेकिन मन्द हो वह उसे तेज़ करावे, जिसके अन्दर तेज़ चिनगी हो वह उसे और भी तेज़ करवा कर लौटे। अगर इन बातों का लिहाज़ न रक्खा गया और महज़ कारख़ानों व कॉलिजों की रौनक़ और सत्संग की भीड़भाड़ या रुपये पैसे भेंट चढ़ाने ही पर सन्तोष कर लिया गया तो सख़्त अफ़सोस होगा। मालूम होवे कि सत्संग के स्कूल, कॉलिज, कारख़ाने व हस्पताल वग़ैरह आध्यात्मिक संस्थाएँ नहीं हैं। इनकी तरक़्क़ी व रौनक़ से लोगों को रूहानी तरक़्क़ी हासिल नहीं हो सकती। इनसे संगत की सिर्फ़ संसारी ज़रूरतें पूरी हो सकती हैं और संगत को आराम मिल सकता है। ये चीज़ें दरअसल सत्संग के पौदे के गिर्द बाड़ के तौर पर लगाई

गई हैं। मूर्ख बाड़ ही पर तवज्जुह रखते हैं लेकिन बुद्धिमान बाड़ से घिरे हुए पौदे की तरफ़ तवज्जुह देते हैं।

बचन (४८)

बाज़ क़ौमें विवाह (शादी) की रस्म को एक पवित्र संस्कार की बड़ाई देती हैं और बाज़ उसे सिर्फ़ एक ठेका समझती हैं। दरअसल शादी एक ऐसा इन्तिज़ाम है जिसकी मार्फ़त इन्सान की नसल दुनिया में क़ायम रहती है और नश्व पाती है और चूँकि हर सभ्य जाति का कर्तव्य है कि दुनिया से दुःख दूर करने और सुख का राज चलाने के लिये कोशिश करे—और यह बात सिर्फ़ सन्तान के लायक़ व क़ाबिल होने ही से मुमकिन है—इसलिये हर माता पिता का कर्तव्य हो जाता है कि शादी को पाशविक वासनाएँ पूरी करने का हीला या ज़रिया न समझें बल्कि यह ख़्याल करें कि उनके इस कर्म से दुनिया के दुख सुख पर भारी असर पड़ता है; क्योंकि अगर उनकी सन्तान मूर्ख या निर्दय पैदा हुई तो दुनिया के दुख में और अगर लायक़ व नेक होगी तो दुनिया के सुख में वृद्धि करेगी। इसलिये मुनासिब है कि वह अपने को ऐसी पवित्र आत्माओं के संसार में जन्म लेने का ज़रिया बनावें जो संसार में सुख फैलावें, जो आप सुखी रहें और दूसरों को सुखी करें।

बचन (४९)

सत्संगियों की मन व अभ्यास के सम्बन्ध में कुल शिकायतों की वजह प्रेम की कमी है। मालिक के चरणों का प्रेम ऐसी अकसीर (दवा) है जिसके हृदय के अन्दर दाख़िल होते ही जीव के सब रोग सोग मिट जाते हैं। इसलिये हर सत्संगी को चाहिये कि रोज़ाना दिन में कई बार और कम से कम प्रातःकाल ज़रूर ही प्रेम की दात के लिये प्रार्थना करे। प्रेम बाज़ार से नहीं मिल सकता, न दौलत से ख़रीदा जा सकता है। यह कुल मालिक का दरवाज़ा खटखटाने ही से मिलता है। इसके हासिल करने के लिये सत्संगियों को किसी तरह असावधानी या लज्जा नहीं करनी चाहिये।

बचन (५०)

मुक्ति प्राप्त करने के दो तरीक़े हैं। अपने हाथ पाँव मार कर अधिकार पैदा करना या सच्चे सतगुरु की शरण लेना। पहिला तरीक़ा कठिन है लेकिन असंभव नहीं है। दूसरा तरीक़ा सुगम है लेकिन भय से पूर्ण है क्योंकि अगर किसी साधारण पुरुष की शरण धारन करली गई जो मन व शरीर का दास है और जिसके अन्दर सुरत सोई हुई है तो सारी उम्र बरबाद जायगी और ग़लत आशा की वजह से अपने हाथ पाँव चलाने का अवसर भी न मिलेगा, अलबत्ता अगर किसी को सच्चे सतगुरु मिल जावें तो उनकी शरण धारन करने से

बढ़ कर रसीला और आसान कोई दूसरा रास्ता हो ही नहीं सकता। इसलिये हर शख़्स पर फ़र्ज़ है कि अपने लिये मुनासिब रास्ता चुने और जो रास्ता पसंद आवे उसपर सावधानी से चले। सबसे उत्तम यह होगा कि मनुष्य अपने हाथ पाँव भी चलावे और खोज करके सच्चे सतगुरु की शरण भी धारन करे।

वचन (५१)

जैसे चिमगादड़ कह सकते हैं कि सूर्य की सत्ता में बिना विश्वास लाये उनका सब काम चल रहा है या गाय, भैंस कह सकती हैं कि विज्ञान या भूगोल विद्या में विश्वास लाये बिना उनका अच्छी तरह निर्वाह हो रहा है इसी तरह बाज़ इन्सान भी कह देते हैं कि मालिक की सत्ता में विश्वास लाये बिना उनका सब काम चल रहा है, मगर उनसे पूछो आया उनके दिल में ऊँची से ऊँची आध्यात्मिक गति या अपने निज आपे का ज्ञान प्राप्त करने, पंच ज्ञानेन्द्रियों से परे का हाल जानने और उस महान् आत्मा का दर्शन करने के लिये, जिसके आधार पर कुल सृष्टि स्थिर है, शौक़ व प्रेम मौजूद है ? अगर नहीं है तो उनका कहना दुरुस्त है लेकिन जिस हृदय के अन्दर इस क़िस्म का शौक़ व प्रेम मौजूद है उसका काम मालिक की सत्ता में विश्वास लाये बिना कभी नहीं चल सकता।

बचन (५२)

बाज़ लोग उपदेश लेने के बाद आशा करने लगते हैं कि अब उन्हें कोई दुख व क्लेश व्यापने नहीं चाहियें और दुनिया का हर काम उनकी इच्छा के अनुसार होना चाहिये। यह उनकी बड़ी भूल है। सतगुरु की शरण लेने पर जीव को पहले तो यह समझ आनी चाहिये कि हर बात के कर्ता धर्ता हुज़ूर राधास्वामी दयाल हैं और जो कुछ हालत दुख या सुख की इसके सिर पर आती है वह उन दयाल ही की मौज से आती है और जो कुछ वह दयाल इसके लिये रवा फ़र्माते हैं वह ज़रूर इसकी बेहतरी के लिये होता है क्योंकि पिता अपने पुत्र का नुक़्सान किसी हालत में नहीं कर सकता। दोयम् सच्चे तौर पर सतगुरु की शरण वही लेता है जिसने दुनिया व दुनिया के सामान से किसी क़दर मुँह मोड़ लिया है और जिसे दुनिया व दुनिया के सामान तुच्छ दिखलाई पड़ते हैं। ऐसी सूरत में ज़िन्दगी की ऊँच नीच हालतें आने पर मन के डाँवाडोल होने का मौक़ा नहीं रहता। सोयम् यह भी है कि सच्ची शरण लेने वाले की हुज़ूर राधास्वामी दयाल भी ख़ास तौर पर रक्षा व सँभाल फ़र्माते हैं। लेकिन इसके यह मानी नहीं हैं कि दुनिया का कुल कारख़ाना किसी सत्संगी के इच्छानुसार चलने लगे। जो लोग यह ग़लत समझौता धारण करते हैं वे अपनी इच्छा के प्रति-

कूल दशाएँ प्रकट होने पर डाँवाडोल हो जाते हैं और स्वार्थ व परमार्थ दोनों के आनन्द से खाली रहकर दिन काटते हैं।

वचन (५३)

राधास्वामी-मत का उपदेश यह है कि सन्त सतगुरु की सहायता के बिना जीव का पूरा उद्धार हो ही नहीं सकता। ज़रा ख़्याल करो कि जीव कैसा बेतरह संसार में फँसा है। खुद पृथ्वी और उसका हर एक सामान हमारी सुरत को अपने अन्दर जज़्ब किया चाहता है। पृथ्वी की सहायता के लिये सूर्य, जो तमाम सूर्यमंडल की मरक़ज़ी यानी केन्द्रिक शक्ति का भंडार है, दिन रात ज़ोर लगा रहा है और सूर्य की सहायता चन्द्रलोक का धनी, ब्रह्म व पार-ब्रह्म आदि कर रहे हैं और इन सब की कोशिश यही है कि कोई सुरत ब्रह्माण्ड के पार न जाने पावे इसलिये सच्ची मुक्ति प्राप्त करने यानी ब्रह्माण्ड से बाहर निकल जाने के लिये उचित है कि ब्रह्माण्ड से परे की कोई शक्ति, जो इस पिण्डदेश और ब्रह्माण्ड की शक्तियों से अधिक बलवती हो, हमारी सहायता करे। ब्रह्माण्ड के परे निर्मल चेतन यानी सत्य देश है और सन्त सतगुरु सत्य देश की धार ही को कहते हैं। यही वजह है कि राधास्वामीमत में संत सतगुरु की सहायता पर इसक़दर ज़ोर दिया जाता है।

बचन (५४)

जैसे बाज़ लोग, जिनमें ख़ास गुण होते हैं, राजाओं बादशाहों के दरबार में दख़ल पाये बिना हरगिज़ चैन नहीं लेते क्योंकि वह जानते हैं कि उनके गुणों का आदर मान राजा बादशाह ही कर सकते हैं लेकिन वे लोग, जिनमें कोई ख़ास गुण नहीं होता, मामूली अहलकारों से ही तअल्लुक़ पैदा करके शान्त हो जाते हैं, ऐसे ही बाज़ प्रेमी जन तो बिला सन्त सतगुरु से प्रेम क़ायम किये सन्तुष्ट नहीं होते और बाज़ महज़ उनकी इस्तेमाली चीज़ें स्पर्श करके शान्त हो जाते हैं। जिस शख़्स के हृदय में मालिक के दर्शन की चाह है उसे चाहिये कि मालिक को छोड़ कर दूसरे किसी के मिलने पर सन्तुष्ट न हो वरना उसे पछताना पड़ेगा।

बचन (५५)

आजकल परमार्थ व परमार्थी संस्थाओं का नाम बद-नाम हो रहा है। वजह यह है कि प्रायः परमार्थी संस्थाएँ ऐसे लोगों के हाथों में हैं जिन्हें न आध्यात्मिकता से कोई संबन्ध है, न जनता की बेहतरी से कोई वास्ता है। जब कोई महापुरुष अपना अमृतरूपी उपदेश जारी फ़र्माते हैं तो प्रेमी जन प्रभावित हो कर उनके चरणों के इर्द गिर्द जमा होने लगते हैं और जब वे देखते हैं कि वे महापुरुष अपना तन, मन व धन जनता की निःस्वार्थ सेवा में सर्फ़

करते हैं और बावजूद दुनिया से बेग़रज़ होने के अपनी विद्या आम लोगों को ख़ुशी से सिखलाते हैं और अपनी ओर से प्रेम की दात बख़्शिश फ़र्माते हैं तो स्वाभाविक तन, मन, धन भेंट करने के लिये उनका भी दिल उमँगता है। धीरे धीरे ऐसे प्रेमी जनों की तादाद काफ़ी बढ़जाने से वहाँ सोने चाँदी की नदी बहने लगती है और कुछ अर्से बाद जब वह महापुरुष अपना काम पूरा करके दुनिया से रुख़सत हो जाते हैं तो या तो कोई मतलबी शख़्स ख़ुद उनकी गद्दी सँभाल लेता है या कोई नाक़ाबिल शख़्स गद्दी पर बिठला दिया जाता है जिससे स्वार्थियों को अपने हाथ रँगने का मौक़ा मिले। महापुरुष का सिर से हाथ उठजाने पर रुपये पैसे की तरक़्क़ी और रूहानियत व पाकीज़गी की मादूमी से इस संयोग में क़िस्म क़िस्म की ख़राब रस्में व चालें जारी हो जाती हैं और आम लोग इस बिगड़ी परमार्थी संस्था का हाल मुलाहिज़ा करके सच्चे परमार्थ और सच्ची परमार्थी संस्थाओं को घृणा की दृष्टि से देखने लगते हैं, लेकिन विचार करने से मालूम होगा कि यह उनकी भूल है क्योंकि वे परमार्थ और परमार्थी संस्थाओं की लाशों को सच्चा परमार्थ व परमार्थी संस्थाएँ ख़्याल करते हैं। जैसे किसी जिस्म के अन्दर से रूह के निकल जाने पर वह जिस्म मुर्दा हो जाता है और सड़ने लगता है ऐसे ही किसी परमार्थी संयोग के अन्दर से सच्चे महापुरुष के रुख़सत

हो जाने पर उस संस्था के अन्दर सड़न पैदा हो जाती है। मालूम होवे कि सच्चा महापुरुष या सच्चा सतगुरु दरअसल वह सुरत या रूह है जो किसी इन्सानी जिस्म के अन्दर वर्तमान है और जागृत या चेतन है और सच्चे मालिक से मेल प्राप्त किये है, उसका बाहरी जिस्म और दुनिया में काम करने वाला मन केवल उस सुरत के वस्त्र या गिलाफ़ हैं और सच्चे सतगुरु से उनकी सन्तान को आम तौर पर महज़ उनके खून का क़तरा मिलता है और चूँकि खून महज़ उनकी रूह के गिलाफ़ का अंश है इसलिये इस खून के रिश्ते की वजह से किसी महापुरुष की सन्तान में उनका असली जानशीन बनने की योग्यता नहीं आसकती।

बचन (५६)

कहने को तो हर कोई मुक्ति का तलबगार है लेकिन हर शख़्स इस लफ़्ज़ को एक ही मानी में इस्तेमाल नहीं करता। जैसे बाज़ लोग मुक्ति का मतलब संसार के दुःखों से छूट जाना लेते हैं—ये दरअसल जन्म मरण व संसार के दुःखों से डरते हैं। सन्तमत में मुक्ति का मतलब सच्चे मालिक से मिल कर एक हो जाना है। दुनिया की हर क़ौम के अन्दर रिवाज है कि प्यार का अंग प्रगट होने पर एक शख़्स दूसरे से अपने जिस्म का कोई हिस्सा स्पर्श करता है जैसे बाज़ लोग हाथ से हाथ मिलाते हैं, बाज़

नाक से नाक छूते हैं, बाज़ मुँह से मुँह जोड़ते हैं। इन कारवाइयों से दरअसल उनकी जीवात्माएँ एक दूसरे से मिला चाहती हैं लेकिन चूँकि जिस्म स्थूल हैं इसलिये उनके द्वारा महज़ क्षणिक और ऊपरी मेल प्राप्त होता है। इससे समझ में आ सकता है कि अगर किसी आत्मा के ऊपर से तन व मन के ग़िलाफ़ क़तई उतर जाँय और वह सच्चे मालिक के हुज़ूर में पहुँच जाय तो उस वक़्त क्या हालत होगी? हालत यह होगी कि एक तरफ़ तो प्रेमभरी चेतन बुन्द सच्चे मालिक की तरफ़ बढ़ रही है और दूसरी तरफ़ चेतन शक्ति का अपार सिन्धु उस सुरत को अपनी तरफ़ आकर्षण कर रहा है गोया सुरत सच्चे मालिक में समाया चाहती है और सच्चा मालिक सुरत को अपने में जज़्ब किया चाहता है जिसका नतीजा बिलआख़िर यही होगा कि सुरत सच्चे मालिक के साथ मिल कर एक हो जाएगी।

मुक्ति का यह तात्पर्य सिद्ध होने पर मुक्ति के हर चाहने वाले पर फ़र्ज़ हो जाता है कि इस दौलत के पाने के लिये जो ज़ीना मुक़र्रर किया गया है उसपर क़दम जमाने के लिये पूरी कोशिश करे और वह ज़ीना सतगुरु के साथ एक हो जाना है। जो शख़्स ऐसे पुरुष से, जो मालिक के साथ एक हो रहा है, एक होने की योग्यता रखता है वही मालिक के साथ एक हो सकता है।

बचन (५७)

अगर किसी सत्संगी को सत्संग में कोई सेवा मिल जाए, तो उसे कभी यह ख़याल न करना चाहिये कि यह सेवा उसे उसकी किसी ख़ास योग्यता के कारण मिली है या यह कि उसके बिना सत्संग का फ़ुलाँ काम चल ही नहीं सकता। राधास्वामी दयाल न किसी की सेवा के मुहताज हैं और न ही किसी की सहायता व योग्यता के। जब वह किसी जीव पर दया फ़रमाया चाहते हैं तो उसके लिये सेवा करने का अवसर पैदा कर देते हैं। जब किसी बड़भागी को कोई सेवा मिले तो उसे चाहिये कि उसका पूरा लाभ उठावे। हाथ आया मौक़ा खो देने पर सैकड़ों बरस का फेर पड़ सकता है।

— —

बचन (५८)

सवाल सत्संगी का–क्या यह ज़रूरी है कि हर एक बड़े काम करने वाला ग़रीब घराने में जन्म ले ?

जवाब–ऐतिहासिक ग्रन्थों से मालूम होता है कि बहुधा बड़े काम करने वालों ने ग़रीब घरानों ही में परवरिश पाई– हज़रत मसीह ने बढ़ई के घर, हज़रत मुहम्मद ने गड़रिये के घर, कृष्ण महाराज ने अहीर के घर और कबीर साहब ने जुलाहे के घर, लेकिन यह कोई ज़रूरी नियम नहीं है।

नियम तो यह है कि सब महापुरुष ऐसे घर में जन्म धारण फ़रमाते हैं जहाँ से वह अपना काम अच्छी तरह व सहज में अंजाम दे सकें।

बचन (५६)

जो लोग सत्संग की सेवा में लगे हैं उन्हें दिन बदिन अपनी ज़िम्मेवारियाँ बढ़ती देख कर घबराना नहीं चाहिये। उनको याद रखना चाहिये कि राधास्वामी दयाल सब गुणों के भंडार हैं और हमारे माता पिता हैं, उनके दरबार से हमें हर चीज़ की दात मिल सकती है बशर्तेकि जो चीज़ हम माँगें, खुद हमारे व नीज़ दूसरों के लिये किसी तरह दुखदाई न हो। बहुत से सत्संगी विश्वास में कमज़ोरी की वजह से दात माँगने में झिजकते हैं। उन्हें जल्द से जल्द अपनी यह कमज़ोरी दूर करनी चाहिये।

बचन (६०)

परोपकार करने के लिये अव्वल योग्यता या अधिकार की आवश्यकता है और अधिकार अपनी आला शक्तियाँ जगाने से आता है और आला शक्तियाँ अमल यानी साधन करने से जगती हैं इसलिये बुद्धिमान वही मनुष्य है जो पहले अपनी आला शक्तियाँ जगाने के लिये साधन करता है और साधन पूरा होने पर परोपकार में लगता है। बख़ि-

लाफ़ इसके बहुत से लोग, जो न कोई अधिकार रखते हैं न तजरुबा, बिना जाने या दूसरों से सुने सुनाये काम करके अपने तईं परोपकारी कहलाते हैं और इसी में सन्तुष्ट रहते हैं। यह उनकी भूल है। असली परोपकारी वह है जिसकी समझ में यह आ गया है कि आम लोगों की असली भलाई किस बात में है और जिसमें वह भलाई करने का अधिकार मौजूद है और अगर ये दोनों बातें नहीं हैं तो जैसे कपड़े रँगा लेने से कोई शख़्स असली साधू नहीं बन जाता वैसे ही परोपकारी की पोशाक पहिन लेने से कोई शख़्स असली परोपकारी नहीं बन सकता।

बचन (६१)

जीवों के कल्याण के निमित्त मालिक बहुत से अजीब व ग़रीब इन्तिज़ाम करता है और उनमें से एक यह भी है कि वह अपने निज अंशों को संसार के अँधेरे से अँधेरे कोनों में जन्म दिलवाता है। जन्म पाकर वे निज अंशें स्वाभाविक तौर पर अनेक लोगों से सम्बन्ध पैदा करते हैं जिससे वे लोग मालिक की दया के अधिकारी बन जाते हैं।

निज अंशों के जन्म धारण करने के नियम यकायक समझ में नहीं आ सकते। जैसे ज़ोर की आँधी चलने से किसी देश से किसी फल का बीज उड़ कर दूर फ़ासले पर किसी दूसरे देश में चला आवे और नामालूम तौर पर परवरिश पाकर वृक्षरूप

वन जावे और फल देने लगे तो कोई इस वृक्ष को देख कर तहक़ीक़ तौर से यह नहीं कह सकता कि इसका बीज वहाँ कैसे आया और जड़ पकड़ गया क्योंकि किसी मनुष्य की बुद्धि ने इस काम में हिस्सा नहीं लिया है। ऐसे ही निज अंशों के जन्म के सम्बन्ध में क़ुदरत की जानिब से गुप्त लेकिन पूरा इन्तिज़ाम होने से आम लोग उसका भेद समझाने में लाचार रहते हैं। मालिक ने एक तरफ़ तो दंड यानी सज़ा के नियम बनाये हैं और दूसरी तरफ़ दया यानी बख़्शिश के जिनके प्रताप से संसार का निर्वाह हो जाता है और उसके अँधेरे से अँधेरे कोने में आध्यात्मिकता का प्रकाश पहुँच जाता है।

बचन (६२)

बाज़ स्त्रियाँ प्रार्थना करती हैं कि उनके पति सत्संगी बन जायँ। उनका प्रार्थना करना बेजा नहीं है लेकिन उनके लिये मुनासिब है कि अपने पतियों के साथ ऐसा बर्ताव करें कि उनको यक़ीन होजाय कि राधास्वामी दयाल की चरणशरण स्वीकार करने से उनका मन निर्मल हो रहा है। जब उनको इसतरह का विश्वास हो जायगा तो ज़रूर उनको राधास्वामी-मत की शिक्षा जानने की इच्छा पैदा होगी और यह इच्छा पूरी करने के लिये जब वे मत की दो एक पुस्तकें ध्यान से पढ़ लेंगे तो अवश्य

उनके मन में राधास्वामी-मत की सचाई व बुज़ुर्गी का विश्वास बैठ जावेगा। इस शिक्षा पर अमल करने से न सिर्फ़ स्त्रियों की अपने पतियों के बारे में इच्छा पूरी हो जायगी बल्कि उनके घर में सुख शान्ति बढ़ती जावेगी और उनके स्वभावों में निहायत खुशगवार तब्दीली होती जावेगी। किसी सम्बन्धी को ज़बरदस्ती सत्संगी बनाने की चाह उठाना ग़लत व नामुनासिब है। परमार्थ के बारे में हर किसी को पूरी स्वतन्त्रता रहनी चाहिये। इसके अलावा सभी जीव मालिक के बच्चे हैं और उसे अपने बच्चों की हमारी निसबत कहीं अधिक फ़िक्र है। हम महज़ मोहबस उनकी उन्नति चाहते हैं और मालिक अपने स्वभावबस उनकी उन्नति की फ़िक्र करता है।

बचन (६३)

ज़िक्र है कि एक मर्तबा कहीं पर कुछ लोग जमा थे और यह सवाल उठा कि दुनिया में सब से दुर्लभ वस्तु क्या है। एक बुज़ुर्ग ने जवाब दिया—"साँप के सिर की मणि," दूसरे ने कहा—"वेदमंत्रों के अर्थ जानने वाला पण्डित" और तीसरे ने कहा—"सच्चा मित्र"। अन्त में सब ने यही माना कि दुनिया में सच्चा मित्र सबसे दुर्लभ है। कारण यह है कि दुनिया में मित्र तो बहुत मिलते हैं लेकिन वे सिर्फ़ एक हद तक मित्रता निभा सकते हैं।

बाज़ तो सिर्फ़ सुख के साथी होते हैं, बाज़ एक हद्द तक दुख में मददगार होते हैं और बाज़ सख़्त मुसीबत में भी काम आते हैं लेकिन मौत के वक़्त कोई भी मित्र काम नहीं आसकता। बीमारी, बुढ़ापा और मौत बड़े बड़े मित्रों को जुदा व परेशान कर देते हैं लेकिन सच तो यह है कि दुनिया में सच्चे मित्रों की माँग भी नहीं है। आम लोग ऐसे ही मित्र चाहते हैं जो उनकी मर्ज़ी के मुताबिक़ चलें और उन्हें बेख़ौफ़ अपने मन के अङ्गों में बर्तने दें। जीव के सच्चे मित्र सन्त सतगुरु हैं। वह न किसी के डराये डरते हैं, न बहकाये बहकते हैं, जीव को हमेशा सच्ची सलाह देते हैं और उसकी हर हालत में रक्षा फ़र्माते हैं। जीव सो जाता है लेकिन वह सदा जागते रहते हैं, जीव उन्हें छोड़ना भी चाहे तो वह उसे नहीं छोड़ते। जीवों को चाहिये कि ऐसे सच्चे मित्र की पूरी क़दर व इज़्ज़त करें और उनकी क़दर व इज़्ज़त करनी यही है कि उनसे सच्चाई के साथ बर्ताव करें। दुनिया के मित्र जीव के मरने पर इधर ही खड़े रोते हैं लेकिन सन्त सतगुरु उस समय जीव की ख़ास सहायता फ़र्माते हैं और शरीर छोड़ने पर उसको अपने संग लेजाकर सुखधाम में बास दिलाते हैं और धीरे धीरे उसको अपने धाम में बास पाने के लायक़ बना कर अपने समान गति दिलाते हैं।

———

बचन (६४)

कहने के लिये राधास्वामी-मत का उपदेश तीन फ़िक़रों में हो सकता है यानी (१) ऐ मनुष्य ! तेरे अन्दर असली जौहर तेरी सुरत या रूह है, (२) तेरी सुरत सच्चे मालिक का अंश है और (३) तू अब कोशिश करके सुरतरूप हो जा। लेकिन इस उपदेश पर अमल करने के लिये सच्चे भेदी गुरू की और खुद सुरतरूप बनने की सच्ची इच्छा की ज़रूरत है। इसलिये जिनको सच्चे सतगुरु मिल गये या जिनके हृदय में सुरतरूप होने की सच्ची इच्छा मौजूद है वे ही इस मत से लाभ उठा सकते हैं। जो लोग अपनी वर्तमान दशा में प्रसन्न हैं उनके लिये राधास्वामीमत का उपदेश बेसूद है। न वे सतगुरु की खोज करेंगे, न उन्हें सतगुरु मिलेंगे और न ही उनसे सुरतरूप होने का साधन बन पड़ेगा।

बचन (६५)

दुनिया में हाथी, घोड़ा, अन्न और रुपया वग़ैरह धन माने जाते हैं और हर कोई जानता है कि संतोषधन प्राप्त होने पर ये सब धूल के समान ब्यापने लगते हैं लेकिन नाम का धन संतोष से भी बढ़कर है। इसके प्राप्त होने पर संतोष भी कंगाल दरसता है। इस देश में बहुत से ऐसे पुरुष हुए जिन्हें नाम का धन प्राप्त था और अब भी

दया से सत्संग में ऐसे पुरुष मौजूद हैं । राधास्वामी दयाल अपने प्रेमी भक्तों को इसी धन की बख़्शिश फ़र्माते हैं जिसे पाकर वे दुनिया से बेनियाज़ हो जाते हैं ।

बचन (६६)

हर एक प्रेमीजन को चाहिये कि मालिक से मालिक ही को माँगे, अलबत्ता यह माँग माँगने से पहले अपना हृदय साफ़ करके मालिक के बैठने और अपनी आँखें धोकर मालिक के दर्शन के लायक़ बना लेनी चाहियें । ऐसी तय्यारी देख कर ही मालिक यह माँग पूरी करता है । बिला मुनासिब तय्यारी किये बड़ी बड़ी माँगें माँगनी महज़ हिर्स के अंग में बर्तना है । मुनासिब तय्यारी करके मुरादें माँगना सच्चे शौक़ की मौजूदगी ज़ाहिर करता है और बिला सच्चे शौक़ की मौजूदगी के कभी बड़ी मुरादें पूरी नहीं होतीं ।

बचन (६७)

अगर किसी जीव की सच्चे सतगुरु की तलाश में सारी उम्र भी गुज़र जाय तो कोई हर्ज नहीं क्योंकि अपने बल से या अधूरे शिक्षक की सहायता से जीव मालिक का दर्शन नहीं पा सकता । जीव को इसमें जब सफलता होगी तब पूरे सतगुरु ही की सहायता से होगी । इसलिये बजाय इसके कि कोई शख़्स मालिक की प्राप्ति के लिये

अपना वल नाहक़ लगावे, क्यों न उसको सच्चे सतगुरु की खोज में सर्फ़ करे और सफलता प्राप्त करे। अगर जिज्ञासु सुबह उठ कर अपना सिर दीनता से ज़मीन पर रखकर मालिक से प्रार्थना करे कि दुनिया में अगर कहीं सच्चे सत-गुरु हैं तो उसको पता बख़्शा जावे और यह प्रार्थना पेश करने के बाद अन्तर में जवाब के लिये कुछ देर इन्तिज़ार करे तो नामुमकिन नहीं है कि उसकी मुराद बर आवे। सच्चे सतगुरु के लिये कठिन नहीं है कि ऐसी प्रार्थना के जवाब में जिज्ञासु के अन्तर में अपना स्वरूप प्रकट करके उसकी शान्ति फ़र्मावें। अन्तर में दर्शन पाते ही जिज्ञासु की कठि-नाई हल हो जाती है क्योंकि वह इस स्वरूप को ख़्याल में रखकर आसानी से सतगुरु का खोज कर सकता है।

वचन (६८)

जब किसी शख़्स को सच्चे मालिक का दर्शन हो जाता है तो वह उस अचिन्त पुरुष से स्पर्श होने पर निश्चिन्त हो जाता है और उसका अपना काम पूरा हो जाता है और अगर वह आयन्दा संसार में रहता है तो मालिक के ख़ास हुक्म से और दूसरे लोगों को सीधे रास्ते पर लाने और उनकी सहायता करने के लिये। उसे अपने लिये किसी साधन की आवश्यकता नहीं रहती और वह अपने जीवन का हर क्षण और अपनी ताक़त का हर ज़र्रा दूसरों

की सहायता में सर्फ़ करता है और जैसे माता खून के रिश्ते की वजह से अपने बच्चों के साथ गहरी मोहब्बत करती है ऐसे ही वह शख़्स, जिसको मालिक का दर्शन प्राप्त हो जाता है, रूहानी रिश्ते की वजह से प्राणीमात्र के साथ ऐसी ही मोहब्बत करता है जैसी कि मालिक करता है और चूँकि उसकी प्रीति सुरत के घाट की होती है—जो मन के घाट के मुक़ाबिले जहाँ से माता प्रीति करती है निहायत निर्मल और बलवान है इसलिये उसकी जगत के जीवों के लिये मोहब्बत माता की मोहब्बत के मुक़ाबिले निहायत निर्मल और बढ़ कर मज़बूत होती है।

बचन (६९)

मनुष्य संसार में तीस या पैंतीस वर्ष तक दूसरों की दिल व जान से सेवा करता है और अपनी उम्र का सबसे अच्छा हिस्सा इसी में सर्फ़ कर देता है मगर उसे इनाम यह मिलता है कि बूढ़ा होने पर काम से हटा दिया जाता है और चूँकि अब किसी दूसरे काम के लायक़ नहीं रहा है इसलिये बाक़ी उम्र निहायत परेशानी में गुज़ारता है। हज़ारों लाखों आदमी संसार के इस इन्तिज़ाम के नुक़्स की वजह से दुख सह रहे हैं लेकिन तो भी बोध नहीं होता कि संसार का इन्तिज़ाम असार व असत्य है। जो जीव संसार से कार्यमात्र सम्बन्ध रखते हैं और अपनी

ज़िन्दगी मालिक की सेवा में सर्फ़ करते हैं वे आराम से रहते हैं, क्योंकि मालिक का यह दस्तूर नहीं है कि समय बीतने पर सेवक को अपने दर से धकेल दे। ज्यों ज्यों समय गुज़रता है मालिक अपने भक्तों को ज़्यादा से ज़्यादा नज़दीकी बख़्शता है और एक दिन अपने चरणों में मिला लेता है। इस गति के प्राप्त होने पर जो आनन्द भक्तजन को प्राप्त होता है उसका कोई वार पार नहीं है।

बचन (७०)

बाज़ संगतों में प्रार्थना करने पर बड़ा ज़ोर दिया जाता है और उनके अन्दर ऐसे बहुत से लोग मिलते हैं जो घंटों तक प्रार्थना कर सकते हैं। राधास्वामी-मत में प्रार्थना करना मना नहीं है लेकिन यह सिखलाया जाता है कि जो कुछ मालिक के चरणों में पेश करना हो थोड़े से लफ़्ज़ों में अर्ज़ करो और वह भी अपना रोज़ाना अभ्यास करने के बाद। मालूम हो कि असली फ़ायदा सुमिरन, ध्यान व भजन करने में है। जो शख़्स चित्त लगाकर अभ्यास करता है उसे प्रार्थना करने के लिये बहुत कम मौक़ा होता है क्योंकि अव्वल तो मालिक अन्तर्यामी खुद ही उसकी सब ज़रूरतें पूरी कर देता है और दोयम् उसे शौक़ राज़ी ब रज़ा रहने का हो जाता है। लम्बी चौड़ी प्रार्थनाएँ चंचल चित्त ही कर सकता है। जब मनुष्य किसी हाकिम के रूबरू जाता है

तो लम्बी चौड़ी बातें नहीं बनाता और जब कोई राजा या बादशाह के रूबरू पेश होता है तो और भी थोड़ा बोलता है, फिर सच्चे मालिक के हुज़ूर में पेश होकर कैसे मुमकिन है कि कोई प्रेमीजन लम्बी चौड़ी कथाएँ सुनाने का साहस करे ? अगर वह सच्चा प्रेमी है तो अपनी सब संसारी ज़रूरतें भूल कर दर्शनरस में लीन हो जायगा या नाम के उच्चारण का आनन्द लेगा ।

बचन (७१)

मनुष्य का शरीर बतौर एक कम्बल के है जो उसकी सुरत ने ओढ़ रक्खा है । वक़्त पाकर जब यह बहुत पुराना हो जाता है तो सुरत उसे उतार कर फेंक देती है और दूसरा धारण करती है । और चूँकि यह दूसरे शरीरों को खाकर तय्यार होता है इसलिये फेंके जाने पर बदले के नियमानुसार यह दूसरों की ख़ुराक बनता है । जैसे जल में फेंक देने पर कछुए और मछलियाँ, और ज़मीन में गाड़ देने पर कीड़े मकोड़े वग़ैरह इससे अपना पेट भरते हैं । सत्संगियों को चाहिये कि इस कम्बल में बन्धन न रक्खें और न ही इसके मुतअल्लिक़ किसी वहम में पड़ें । उन्हें सँभाल अपनी सुरत की करनी चाहिये जिसके लिये मुनासिब है कि वे अपने दिल में यह चाह मज़बूत करें कि मरने के बाद उनको कुल मालिक राधास्वामी दयाल के चरणों

में निवास मिले। मौत के वक़्त अनेक ख़्याल और वास-नाएँ अपना ज़ोर दिखलाती हैं। अगर ज़िन्दगी में मालिक के चरणों में बास पाने की चाह मज़बूत न की जायगी तो नामुमकिन नहीं है कि अन्त समय कोई दूसरी चाह अपना ज़ोर चला लेवे। जो लोग सुरत की सँभाल करने के बजाय अपने मुर्दा शरीर की फ़िक्र करते हैं और उसके लिये शान-दार समाधें या मक़बरे बनवाने का इन्तिज़ाम करते हैं उन्हें अन्त समय पछताना पड़ता है।

बचन (७२)

अगर कोई सत्संगी यह ख़्याल करता है कि महज़ रुपये पैसे ख़र्च करने से जीव का कल्याण हो सकता है तो यह उसकी बड़ी भूल है। यह ठीक है कि सत्संग में रुपये पैसे भेंट करने से सत्संगी का धन में मोह कम होता है और उसे गुरु महाराज की दया प्राप्त होती है और दया प्राप्त होने से उसका चित्त शुद्ध होता है और बुद्धि निर्मल होती है और चित्त शुद्ध व बुद्धि निर्मल होने से परमार्थ कमाने में सहूलियत रहती है और बुरे कर्मों से बचाव रहता है लेकिन ये फ़ायदे तब होते हैं जब रुपया पैसा प्रेम व श्रद्धा से भेंट किया जावे। जो लोग प्रेम व श्रद्धा के बजाय महज़ दिखलावे या कोई दुनियवी नफ़ा हासिल करने की ग़रज़ से रुपया पैसा भेंट करते हैं वे नुक़्सान में रहते हैं।

बचन (७३)

बाज़ लोग कहते हैं कि मालिक के यहाँ बड़ा अंधेर है कि इन्सान को, जो सृष्टिनियमों से नावाकिफ़ है, उनके उल्लंघन करने पर सज़ा दी जाती है हालाँकि कोई माता अपने नादान बच्चे को ऐसी हरकत के लिये, जिसकी माहियत वह समझ नहीं सकता, कुछ सज़ा नहीं देती, मगर यह उनकी भूल है। जो लोग मालिक को जानते हैं और जिनसे सुन कर आम लोग मालिक की हस्ती में यक़ीन लाते हैं, बतलाते हैं कि वह मालिक प्रेम व दया का सिन्धु है और जैसेकि दूध के घड़े से दूध ही निकल सकता है प्रेम व दया के सिन्धु से प्रेम व दया ही निकल सकते हैं, इसलिये मालिक ने जितने भी क़ानून बनाये हैं उनसे दया व प्रेम ही की उम्मीद रखनी चाहिये। इसके अलावा ग़ौर करना चाहिये कि अगर सज़ा सिर्फ़ सृष्टि-नियमों से वाक़िफ़ लोगों ही को दीजावे तो इसके यह मानी होंगे कि आयन्दा आग किसी ऐसे बच्चे को न जलावे जो सृष्टिनियमों से नावाक़िफ़ है और चूँकि जब तक किसी बच्चे को जलने का तजरुबा नहीं हो जाता उसे समझ ही नहीं आती कि जलना क्या होता है इसलिये नतीजा यह होगा कि रफ़्ता रफ़्ता आग से जलाने का अमल क़तई छूट जावेगा और चूँकि दुनिया का जड़ मसाला भी अज्ञानता के कारण जलने से सुरक्षित रखना होगा

इसलिये एक दिन दुनिया से जलने का अमल ही उठ जावेगा और इसी तरह सृष्टि के दूसरे सभी काम बन्द करने होंगे, जो सरासर लग़्व है। बर्ख़िलाफ़ इसके इस वक़्त का इन्तिज़ाम यह है कि सृष्टिनियम अपना काम करते हैं, जो उनसे जानकार होकर काम लेता है उसकी वे पूरे तौर से सेवा करते हैं, और जो किसी वजह से उनका उल्लंघन करता है उसको बिला किसी रू व रियायत के नुक़्सान पहुँचाते हैं और अटल रहते हैं, और इस स्वभाव ही की वजह से वे नियम कहलाते हैं और दुनिया के सब इल्म और ख़ुद दुनिया का वजूद क़ायम हैं। ख़्याल करो कि अगर पृथ्वी की आध्याकर्षणशक्ति सिर्फ़ उन लोगों पर असर करे जो उससे वाक़िफ़ हों तो दुनिया का क्या हाल होगा ? मालिक ने इन्सान को अक़्ल दी है जिसको इस्तेमाल करके इन्सान सृष्टिनियमों को बख़ूबी समझ सकता है। इसको चाहिये कि अपनी अक़्ल का मुनासिब इस्तेमाल करे और जान बूझ कर किसी सृष्टिनियम को न तोड़े और नियमों का पालन करके सुख के साथ ज़िन्दगी बसर करे। माँ का दृष्टान्त जो दिया जाता है वह भी ग़लत है। अगर माता अपने नादान बच्चे को कोई क़सूर करने पर सज़ा नहीं देती तो इसकी वजह उसका मोह है। अगर ऐसा न होता तो माताएँ ग़ैरों के बच्चों के नुक़्सान करने पर भी शान्त नज़र आतीं। ख़ुलासा यह कि सृष्टिनियम संसार का

कारख़ाना चलाने, मनुष्य की बुद्धि जगाने और मनुष्य की सहायता करने के निमित्त बनाये गये हैं और अगर उनके उल्लंघन करने पर सज़ा न मिले तो उनसे कोई भी मतलब नहीं निकल सकता।

वचन (७४)

अगर कोई शख़्स यह उम्मीद करता है कि सत्संग दुनिया में बड़े बड़े कॉलिज क़ायम करे या बड़े बड़े कारख़ाने चलावे तो यह उसकी ज़बरदस्ती है। सत्संग का जन्म जीवों को सच्चे परमार्थ का उपदेश करने और उसकी कमाई में मदद देने के लिये हुआ है। पढ़ाई, लिखाई और आर्थिक सिद्धि की संस्थाओं और संसार के कारोबार से सत्संग का सिर्फ़ उस हद तक सम्बन्ध रहेगा जहाँ तक ये सच्चे परमार्थ के प्रचार व उन्नति में सहायक हैं।

वचन (७५)

इन्सान मोम या मिट्टी का पूरे क़द का आदमी आसानी से तय्यार कर सकता है लेकिन असली आदमी बच्चे ही की शक्ल में पैदा होता है और वह भी माता के सख़्त तकलीफ़ उठाने के बाद। ऐसे ही जो जमाअतें असली बच्चे पैदा करने का काम अपने ज़िम्मे लेती हैं उन्हें सख़्त तकलीफ़ें उठानी पड़ती हैं और जो बच्चा वह

तय्यार करती हैं वह शुरू में निहायत नाज़ुक और पस्तक़द होता है और बमुक़ाबिले उन लोगों के जो मोम या मिट्टी का आदमी बनाते हैं वे एक अर्सा तक घाटे में रहती हैं। लेकिन मोम या मिट्टी का आदमी किस काम का? वह सिवाय इसके कि अपने गिर्द तमाशा देखने वालों की एक भीड़ जमा कर ले और क्या कर सकता है? बर्ख़िलाफ़ इसके असली बच्चा हरचन्द सख़्त तकलीफ़ के बाद पैदा होता है और अर्से तक नुक़्सान देता है लेकिन जवान होने पर सैकड़ों काम करता है। चुनाँचे सत्संग के ज़िम्मे यही यानी असली बच्चा पैदा करने की सेवा सुपुर्द हुई है इसलिये सत्संग की तरक़्क़ी आहिस्ता आहिस्ता ही होगी और हमें अनेक तकलीफ़ें उठानी पड़ेंगी और मोम का आदमी तय्यार करने वाली जमाअतों के मुक़ाबले हम एक अर्से तक हेच रहेंगे लेकिन हमारा काम ज़िन्दा व असली होगा और उससे संसार का उपकार होगा।

बचन (७६)

रचना के शुरू में सिर्फ़ वही सुरतें संसार में उतरीं जिनका रुझान या झुकाव माया की जानिब था। माया के देश में आकर इन सुरतों को मायिक शरीर धारण करने पड़े और उनके द्वारा मायिक भोगों से सम्बन्ध क़ायम करके यहीं की हो रहीं। जब तक किसी सुरत का माया की जानिब

झुकाव, जिसे आदि कर्म और काल का क़र्ज़ा भी कहते हैं, ख़त्म न हो जाय उसका माया के देश से छुटकारा नहीं हो सकता। सुरतें आदि कर्म की वजह से संसार में आई और यहाँ आकर उन्होंने अनेक स्थूल कर्म किये जिनका हिसाब इतना बढ़ गया कि कोई हद्द न रही। इन स्थूल कर्मों ही की वजह से अनेक जीव नीच ऊँच योनियों में जन्म धारण करते हैं और संसार के दुख सुख सहते हैं। होते होते जब किसी जीव के स्थूल कर्म ख़ात्मे पर आते हैं तो आदि कर्म का वेग फिर से अपना ज़ोर दिखलाता है और वह जीव फिर अनेक स्थूल कर्म करता है जिनके ख़त्म होने पर फिर आदि कर्म के वेग की बारी आ जाती है। ग़रज़ेंकि जीव आदि कर्म व स्थूल कर्मों के चक्कर में फँसा है। आदि कर्म जड़ है और स्थूल कर्म शाखें। जब स्थूल कर्मों का भुगतान होकर एक मर्तबा शाखें कट जाती हैं तो जड़ से नया मसाला प्रकट होकर नई शाखें उत्पन्न हो जाती हैं। इससे ज़ाहिर है कि जीव का स्थूल कर्मों से छूटना इतना मुश्किल नहीं है, असली मुश्किल काम आदिकर्म से छुटकारा हासिल करना है। आदि कर्म से सहज में छुटकारा हासिल करने के लिये किसी महापुरुष की ख़ास दया व मेहर की ज़रूरत है। जब वे कृपा करके अपने चरणों की प्रीति बख़्शिश फ़र्मावें तो जीव का झुकाव माया के बजाय सच्चे मालिक की जानिब क़ायम हो और आदिकर्म के वेग से हमेशा के लिये छुट्टी मिले, जैसा कि फ़रमाया है:—

शब्द

सतगुरु प्यारे ने चुकाया काल का क़रज़ा हो ॥ टेक ॥
मेहर से मोहिं सतसंग में खींचा। भवती पौद लगा गुरु सींचा॥
काटे विघन और हरजा हो ॥ १ ॥
दया गुरु परख बढ़त परतीती। सेव करत जागत नई प्रीती॥
बढ़त मेरा दिन दिन दरजा हो ॥ २ ॥
शब्द का मारग दीन लखाई। सुत मेरी धुन सँग दीन मिलाई॥
आज घट गगना गरजा हो ॥ ३ ॥
भरम गुरु मेट दिये मेरे सारे। करम भी काट दिये अति भारे॥
काल भी डरसे लरज़ा हो ॥ ४ ॥
राधास्वामी कीन जगत उपकारा। चरन सरन दे जीव उबारा॥
तार दई सब परजा हो ॥ ५ ॥

वचन (७७)

जो लोग मोक्ष के अभिलाषी हैं उन्हें भली प्रकार समझ लेना चाहिये कि मोक्ष के विषय में केवल बातचीत या वाद विवाद कर लेने से मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता। यह संसार कर्मक्षेत्र है यहाँ रहकर कर्म करना उचित है और उचित कर्म करने ही से मोक्ष मिल सकता है। कर्म दो प्रकार के हैं:—एक वे जो हम अपने मन की प्रेरणा से करते हैं और दूसरे वे जो हम मालिक की प्रेरणा से करते हैं। पहली क़िस्म के कर्म भी दो प्रकार के हैं:—एक वे जो हम नेकनीयती से करते हैं और शुभ कर्म कहलाते हैं, दूसरे वे जो हम बदनीयती से करते हैं और मन्दकर्म

कहलाते हैं। शुभ कर्मों का परिणाम सुख होता है और मन्द कर्मों का दुःख। लेकिन शुभकर्म हों या मन्द, दोनों का फल भुगतने के लिये जीव को संसारचक्र में भ्रमण करना पड़ता है अर्थात् अपने मन की प्रेरणा से किये हुए कर्म हमें संसार चक्र से नहीं छुड़ा सकते। इसके लिये मालिक की प्रेरणा की ज़रूरत है और प्रेरणा हासिल करने के लिये प्रेरणा लेने वाला औज़ार दुरुस्त करना लाज़िमी है, जो आसान काम नहीं है। अलबत्ता अगर किसी को भाग्य से सच्चे सतगुरु मिल जायें और वह उनकी शरण लेकर उनकी आज्ञाओं का पालन करने लगे तो उसके लिये मुआमला निहायत आसान हो जाता है क्योंकि सच्चे सतगुरु वही पुरुष होते हैं जिनकी सुरतशक्ति जगी है, जिनका अन्तर में सच्चे मालिक से मेल है, जिनके मन व इन्द्री वस में हैं और जिनका हृदय शुद्ध है, जो हमेशा राज़ी बरज़ा रहते हैं। उनका प्रेरणा लेने वाला औज़ार दुरुस्त रहता है और उनको बार बार मालिक की जानिब से प्रेरणा आती है। वह इसी उद्देश्य से संसार में भेजे व रक्खे जाते हैं। ऐसे पुरुष की आज्ञाओं का पालन मालिक ही की आज्ञाओं का पालन है। कबीर साहब फ़र्माते हैं:—

साध मिले साहब मिले, अन्तर रही न रेख।
मनसा वाचा करमना, साधू साहब एक॥

ऐसे पुरुष की आज्ञाओं के पालन के फल के बारे में हुज़ूर राधास्वामी दयाल का वचन है कि सच्चे सतगुरु की

आज्ञा से जो कुछ काम जीव करता है वह उसे भक्ति का फल देने वाला होता है। भक्ति के अर्थ सच्चे मालिक के चरणों में सच्चा प्रेम है। यह प्रेम ही जीव के शुभ अशुभ कर्मों और उसकी स्थूल व सूक्ष्म वासनाओं को साफ़ कर सकता है। इस प्रेम ही की सहायता से जीव अन्तरी साधन करके अपनी सोई हुई आध्यात्मिक शक्तियों को जागृत कर सकता है और आध्यात्मिक शक्तियों के जगने ही से मोक्ष प्राप्त हो सकता है। इसलिये अगर किसी शख़्स का मन सत्संग में शरीक होने पर भी रूखा फीका रहता है तो ज़ाहिर है कि वह सतगुरु की आज्ञाओं का पालन नहीं करता और वह जितने कर्म करता है अपने मन की प्रेरणा से करता है और अपने शुभ कर्मों का फल सुख और मन्द कर्मों का फल दुःख भोगता है। इस बयान से ज़ाहिर होना चाहिये कि अशुभ या मन्द कर्मों के मुक़ाबिले शुभ कर्म अच्छे हैं लेकिन मोक्ष के अभिलाषी के लिये दोनों प्रकार के कर्म व्यर्थ हैं।

वचन (७८)

अपने मन की प्रेरणा से किये हुए कर्म अहंकार पैदा करते हैं और अहंकार के मानी मालिक से अलहदगी है और सतगुरु की आज्ञा से किये हुए कर्म भक्तिफल देते हैं और भक्ति के मानी मालिक के चरणों में लिपटना है।

अर्जुन ने कृष्ण महाराज की आज्ञा से युद्ध किया और कितने ही शूर वीरों का वध किया। अगर वह अपने मन की प्रेरणा से युद्ध करता तो उसे वह फल हर्गिज़ प्राप्त न होता जो कृष्ण महाराज की आज्ञा से युद्ध करने पर प्राप्त हुआ। इसी तरह जो काम सत्संग के सिल्सिले में किये जाते हैं अगर वे सब अपने मन की प्रेरणा से होते हैं तो उनका परिणाम अहंकार होना चाहिये लेकिन चूँकि काम करने वालों के अन्दर आम तौर प्रेम अंग दिखलाई देता है इससे ज़ाहिर है कि सत्संग के सब काम मालिक की आज्ञाओं के पालन के तौर पर किये जाते हैं और वे सब लोग बड़भागी हैं जो इस तरह अपना नरशरीर सफल कर रहे हैं।

बचन (७६)

जो लोग मालिक की हस्ती में विश्वास रखते हैं लेकिन परमार्थ की काफ़ी समझ बूझ नहीं रखते, अक्सर दो ग़लतियाँ करते हैं। एक यह कि वे ख़्याल करने लगते हैं कि मालिक से मिलना या अन्तरी सम्बन्ध क़ायम करना निहायत आसान है और दूसरे यह कि यह मानकर कि मनुष्य-शरीर रचना भर में सबसे उत्तम शरीर है वे इसी शरीर में रहना पसन्द करते हैं। जैसे गर्मी के महीनों में पिघली हुई बर्फ़ के पानी यानी गंगा-

जल में ग़ोता मार कर शरीर के शीतल व प्रफुल्लित होने पर भोले भाले यात्री ख़्याल करते हैं कि गंगाजी ने उनके सब पाप धो डाले, ऐसे ही ये लोग जब तब अन्तर में ज़रा सी विरह या तड़प पैदा हो कर आँखों में आँसू व कलेजे में ठंडक आ जाने पर विश्वास करते हैं कि उन्हें मालिक से मेल और मनुष्यशरीर का पूर्ण लाभ प्राप्त हो गया।

वचन (८०)

संसार के इन्तिज़ाम इस क़िस्म के हैं कि उनके ज़रिये इन्सानों के दिल में ख़्वाहमख़्वाह ख़ुदग़रज़ी और अहंकार पैदा होते हैं। मसलन् हर शख़्स मजबूरन् अपने शरीर, अपने मकान, अपनी आमदनी, अपनी जायदाद, अपनी स्त्री, अपने बच्चों, अपने ख़ान्दान, अपने शहर, अपने सूबे और अपने मुल्क के लिये जब तब ख़्याल व भाव उठाता है और ये ख़्याल व भाव ख़्वाहमख़्वाह उसके दिल को तंग करते हैं और उसे मिल कर काम करने के नाक़ाबिल बनाते हैं और दूसरों के मुक़ाबिले शरीर, धन, विद्या, मान, प्रतिष्ठा वग़ैरह बेहतर मिलने से उसके दिल में आप से आप इन चीज़ों का अहंकार हो जाता है जिससे ज़िन्दगी और भी बिगड़ जाती है। इस ख़राबी को दूर करने के लिये हर क़ौम व मुल्क के बुज़ुर्गों ने त्योहार के दिन क़ायम किये। उन दिनों में बड़े छोटे, अमीर ग़रीब, लिखे पढ़े व अन-

पढ़, हर क़िस्म के भेद भाव को भुलाकर, एक कुटुम्ब के आदमियों की तरह मिलते हैं और ख़ुशी मनाते हैं और इससे लोगों के दिलों में ख़ुदग़रज़ी व ख़ुदपरस्ती के बजाय दूसरों से प्रेम करने और दिल मिलाने का भाव पैदा होता है। चुनाँचे इसी ग़रज़ से सत्संग के अन्दर भी त्यौहार के दिन क़ायम किये गये हैं।

वचन (८१)

सत्संग को अगर धोबी का घाट कहा जावे तो बेजा न होगा क्योंकि सत्संग में सुरत या रूह की चादर से जन्मान जन्म की मैल छुड़ाई जाती है। लेकिन अफ़सोस इस बात का है कि जैसे बाज़ लोग मैले कपड़े पहिन कर ख़ुश होते हैं क्योंकि वे उन्हें गर्दख़ोरे व सूफ़ियाने ख़्याल करते हैं और उन्हें ग़ुमान है कि मैले कपड़े पहिनने से सर्दी कम लगती है। ऐसे ही बहुत से लोग अपनी सुरत की चादर मैली ही रखना पसन्द करते हैं और इसलिये अपनेतईं सत्संग से दूर रखते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि सत्संग में शरीक होने पर उनके खान पान व रहन सहन पर रोक टोक लगेगी। सत्संग में शरीक होने के लिये उत्तम संस्कारों की ज़रूरत है।

वचन (८२)

सत्संग की शिक्षा थोड़े से शब्दों में बयान की जा सकती है और चार या पाँच बातों के समझ लेने से सब शिक्षा समझ में आ जाती है। पहली बात यह है कि सत्संग सिखलाता है कि ऐ इन्सान ! तू संसार के सामान अच्छी तरह भोग, तुझे कोई मना नहीं करता लेकिन तू अपनेतईं उनमें उलझा मत यानी अपनेतईं उनका दास मत बना। तू पानी पी, पानी में स्नान कर, तैर और पानी का आनन्द ले लेकिन पानी में डूब मत। तू कपड़े पहिन, ओढ़ और बिछा, बढ़िया से बढ़िया कपड़े इस्तेमाल कर लेकिन अपनेतईं कपड़ों से जकड़बन्द मत कर। दूसरी बात यह सिखलाता है कि ऐ इन्सान ! तू अपने शरीर को स्वस्थ व स्वच्छ रख और उसकी मुनासिब रक्षा कर लेकिन उसे अपना असली स्वरूप मत जान। यह शरीर सिर्फ़ तेरे आत्मा का वस्त्र है। एक दिन तुझे यह पुराने कम्बल की तरह उतार कर फेंकना होगा। इसमें बन्धन क़ायम करना ग़लत व नामुनासिब है। तीसरी बात यह सिखलाता है कि ऐ इन्सान ! तू संसार में आवारा-गरदी के लिये नहीं बल्कि ख़ास उद्देश्य के लिये भेजा गया है और वह उद्देश्य यह है कि तू अपनी आध्यात्मिक शक्तियाँ जगावे। जैसे स्थूल आँखों के खुलने पर मनुष्य को सूर्य्य का प्रत्यक्ष दर्शन हो जाता है ऐसे ही

आध्यात्मिक शक्तियों के जगने पर तुझको सुरत की आँखों से तेरे परम पिता का दर्शन प्राप्त होगा और फिर तू इस क़ाबिल हो जायगा कि इस मलिन व झूठे भोगों व सुख के देश से हट कर निर्मल चेतन देश में दाख़िल हो और तेरी सुरत सच्चे मालिक से मेल हासिल करे। तीसरी बात सुनने पर जिज्ञासु के दिल में स्वाभाविक तौर पर सवाल पैदा होगा कि वह अपनी आध्यात्मिक शक्तियाँ कैसे जगावे, चुनाँचे चौथी बात जो राधास्वामी-मत सिखलाता है उसमें इस सवाल का जवाब है। वह यह है कि ऐ इन्सान! तू किसी कामिल उस्ताद की शरण ले यानी किसी ऐसे महापुरुष की शागिर्दी इख़्तियार कर जिसे वह गति, जिसका ऊपर ज़िक्र हुआ, पहले ही प्राप्त है। इसपर जिज्ञासु यह दरयाफ़्त करेगा कि ऐसे महापुरुष को कहाँ तलाश करें। इसके जवाब में राधास्वामी-मत बतलाता है कि अव्वल अपने घर में तलाश कर, वहाँ न मिलें तो अपने शहर या क़स्बे में ढूँढ़, वहाँ न मिलें तो अपने सूबे में, अपने मुल्क या जहाँ कहीं उनकी मौजूदगी का पता चले वहाँ जाकर तलाश कर।

वचन (८२)

इस ज़माने में जबकि परमार्थ जीविका के अधीन हो रहा है अकेले दुकेले आदमी बाहरी त्याग का जीवन

व्यतीत कर सकते हैं लेकिन यह मुमकिन नहीं कि कोई जमाअत यह लक्ष्य सम्मुख रख कर आराम से जीवन व्यतीत कर सके। पिछले ज़माने में इस देश के निवासियों ने बाहरी त्याग पर बहुत ज़ोर दिया जिसका नतीजा यह हुआ कि वे स्वार्थ की दौड़ में दूसरों से पीछे रह गये और पश्चिमी लोगों ने बाहरी अनुराग पर बहुत ज़ोर दिया जिससे वे परमार्थ की दौड़ में पीछे रह गये। सत्संग का लक्ष्य यह है कि परमार्थ व स्वार्थ दोनों को मुनासिब बड़ाई दी जावे ताकि जीव का संसार में भली प्रकार निर्वाह हो और त्याग फल की वासना का होना चाहिये, न कि परिश्रम व धर्म का। पिछले ज़माने के बुज़ुर्गों का भी यही उपदेश था लेकिन लोगों ने उनका असली मतलब न समझ कर उलटे मानी लगा लिये। जीव संसार के पदार्थों में मोह क़ायम करके बन्धन में फँसता है और उनके साथ कार्य्यमात्र बर्ताव करके ज़िन्दगी का लुत्फ़ उठाता है।

बचन (८४)

जीव दुनिया के सामान हासिल करने के लिये एक उम्र तक हाथ पाँव मारते हैं और बड़ी मुश्किल से सामान हाथ आते हैं। बीमारी व बुढ़ापा आ जाने से ये सब सामान बेकार हो जाते हैं इनके रहते हुए चोर, डाकू या जानवरों से नुक़्सान पहुँचने का हर वक़्त अन्देशा लगा

रहता है और मरने के वक़्त उनके मोह से सख़्त तकलीफ़ पहुँचती है। ये सब बातें जानते हुए भी जीव उन्हीं की तरफ़ दौड़ते हैं और आत्म-दर्शन के लिये, जिसके प्राप्त होने पर इन सामान से कहीं बढ़ चढ़ कर आनन्द प्राप्त होता है, जिसको न चोर चुरा सकता है न डाकू छीन सकता है, जिसमें बीमारी व बुढ़ापा किसी तरह का विघ्न नहीं डाल सकते और जिससे मरने के वक़्त कमाल दर्जे का सुख हासिल होता है, कुछ परवाह नहीं करते। यह दुरुस्त है कि हर किसी के लिये आत्म-दर्शन प्राप्त कर लेना आसान नहीं है लेकिन अगर इन्सान ज़रा सी सचौटी के साथ कोशिश करे तो थोड़े ही अर्से के अन्दर अपनी चित्तवृत्ति को छठे चक्र के मुक़ाम पर एकत्र करने का अभ्यास कर सकता है और इस गति से भी जो आनन्द प्राप्त होता है उसकी संसार का कोई भोग बराबरी नहीं कर सकता। राधास्वामी दयाल की फ़र्माई हुई युक्ति का साधन करने से यह गति सहज में प्राप्त हो सकती है। इसके प्राप्त होने पर परमार्थी की हिम्मत बँध जाती है और वह आगे क़दम बढ़ाने की कोशिश करता है और रफ़्ता रफ़्ता ऊँचे घाट के तजरुबे हासिल करके अपना भाग सराहता है।

बचन (८५)

कलों और खिलौनों में बड़ा फ़र्क़ है। देखने में बाज़ खिलौने कलें ही होती हैं लेकिन सिवाय बच्चों का दिल बहलाने के उनसे कोई काम नहीं निकलता और उनके इस्तेमाल करने के लिये ज़्यादा शऊर की ज़रूरत नहीं होती है। लेकिन कलों से बड़े बड़े काम निकलते हैं अलबत्ता अगर कोई नावाक़िफ़ आदमी किसी कल को छेड़ ले तो जल्द ही मुश्किल में गिरफ़्तार हो जाता है। कलों से वाक़िफ़कार आदमी ही काम ले सकते हैं। वाक़िफ़ियत व शऊर के बग़ैर उनसे बजाय नफ़े के नुक़्सान पहुँच जाता है। अफ़सोस है कि ये सब बातें जानते हुए भी रचना की सबसे बड़ी कल यानी कुल मालिक के साथ, जिसकी शक्ति का कुछ वार पार नहीं है, तमाम लोग खिलौने की तरह खेलते हैं, इसके लिये न कोई शऊर सीखता है और न शऊर से काम लेता है। चुनाँचे नतीजा वही होता है जो किसी नावाक़िफ़ आदमी के किसी कल के छेड़ लेने से होता है। यानी लाखों इन्सान मालिक का नाम जपते हैं और किसी न किसी शक्ल में उसकी भक्ति करते हैं और भक्ति के जोश में आकर एक दूसरे का सर फोड़ते हैं गोया मालिक की भक्ति उनके लिये परेशानी का कारण हो रही है। अगर उन्हें भक्ति का शऊर होता तो परेशान होने के बजाय भक्ति का आनन्द लेते।

वचन (८६)

यह मन बड़ा चालाक है। बाज़ लोग कम्बल ओढ़ कर मक्खियों के छत्ते से शहद निकालते हैं, ऐसे ही बहुत से आदमी ज़ाहिरी सादगी व दीनता का लिबास पहन कर अपने लिये दुनिया के सुख के सामान बहम पहुँचाया चाहते हैं। सत्संगी को मन के इस फ़रेब से होशियार रहना चाहिये। इसके लिये मुनासिब है कि अपने हर काम सफ़ाई व ईमानदारी से करे और मौज से जो कुछ खाने व ओढ़ने के लिये मिले उसे खुशी से मंज़ूर करे लेकिन याद रक्खे कि लाखों की आमदनी रहते हुए चार पैसे में गुज़र करना कंजूसी व कम्बख़्ती की अलामत है और चार पैसे की आमदनी रहते हुए लाखों के ख़र्च का ख़्याल उठाना मूर्खता व हविस की निशानी है।

— · —

वचन (८७)

मालिक की हस्ती में विश्वास लाना हर किसी के बस की बात नहीं है। जैसे सबके सब जानवर यकसाँ अक़्ल व तमीज़ नहीं रखते ऐसे ही सब इन्सान भी इस लिहाज़ से बराबर नहीं हैं और जैसे जानवरों के लिये मालिक की हस्ती में विश्वास लाना क़तई नामुमकिन है ऐसे ही बाज़ इन्सानों के लिये भी नामुमकिन है। बहुत से लोग मुँह से मालिक का नाम लेते हैं लेकिन उनके कर्मों से

ज़ाहिर होता है कि उन्हें मालिक की हस्ती में क़तई विश्वास नहीं है। मालिक की हस्ती में विश्वास लाने के लिये इन्सान के अन्दर ख़ास दर्जे की रूहानी क़ाबिलियत दरकार है। संसार में जितने भी शरीर हैं वे दरअसल उनके अन्दर मुक़ीम सुरतों या आत्माओं की चेतनशक्ति के इज़हार का नतीजा हैं यानी उन शरीरों की मार्फ़त उनके अन्दर निवास करने वाली आत्माएँ अपनी अपनी चेतनशक्ति का इज़हार कर रही हैं। और चूँकि सबके सब शरीर यकसाँ नहीं हैं इसलिये ज़ाहिर है कि सबकी सब आत्माओं को अपनी कोशिश में यकसाँ कामयाबी नहीं होती। जिस शरीर के द्वारा चेतनशक्ति का काफ़ी इज़हार होता है उसी के दिल में मालिक की हस्ती का विश्वास क़ायम हो सकता है। इसलिये जो शख़्स यह चाहता है कि उसके दिल में मालिक की हस्ती का विश्वास सच्चा व गहरा क़ायम हो उसे मुनासिब है कि अपने अन्दर अपनी सुरत-शक्ति का प्रकाश तेज़ करे और उसके लिये सुमिरन ध्यान व भजन की युक्तियाँ बहुत ही मुफ़ीद हैं।

बचन (८८)

बाज़ लोग तअज्जुब के साथ सवाल करते हैं कि पिछले ज़माने में तो योगसाधन में सफलता हासिल करने के लिये मुद्दत तक उग्र तप करना पड़ता था और साधन करने

वाले को गृहस्थाश्रम का त्याग करना होता था लेकिन इस ज़माने में सत्संगी हालाँकि न कोई उग्र तप करते हैं और न गृहस्थाश्रम का त्याग करते हैं लेकिन निहायत सन्तुष्ट व प्रसन्न नज़र आते हैं और योगसाधन में सफलता के मुतअल्लिक़ बरमला गुफ़्तगू करते हैं, इसकी क्या वजह है ? वजह यह है कि इस ज़माने में राधास्वामी दयाल बजाय उग्र तप के सच्ची भक्ति द्वारा मनुष्य के हृदय को शुद्ध कराते हैं। जैसे पिछले ज़माने में लोग मिट्टी का चिराग़ जलाकर रोशनी करते थे जिसकी रोशनी कमज़ोर रहती थी और जिसकी बत्ती बार बार बढ़ानी पड़ती थी और जिसके धुएँ से कमरा भर जाता था और आजकल ज़रा से बटन दबाने से बआसानी निहायत तेज़ रोशनी हो जाती है जिसमें धुएँ का नाम निशान भी नहीं होता। हरचन्द दोनों ही रोशनी करने के लिये माक़ूल इन्तिज़ाम हैं और दोनों ही में सृष्टिनियमों से काम लिया जाता है लेकिन एक में अदना सृष्टि-नियम इस्तेमाल होते हैं और दूसरों में आला और आला सृष्टिनियमों के इस्तेमाल से हमेशा सुख ज़्यादा और कष्ट कम होता है। पिछले ज़माने में जो योगसाधन जारी था वह अहंकार का मार्ग था और अब जो साधन जारी है वह भक्ति का मार्ग है जो अहंकार के मार्ग से आला है इसलिये इसमें सुख ज़्यादा है और कष्ट कम। मनुष्य का स्वभाव है कि संसार के जीवों

व पदार्थों से सहज में मुहब्बत पैदा कर लेता है और मुहब्बत क़ायम होने पर उन्हीं का हो रहता है। अगर मनुष्य बजाय संसार के जीवों व पदार्थों के सच्चे मालिक या सच्चे सतगुरु से मुहब्बत क़ायम करे तो क़ुदरती तौर पर यह उनका हो जावेगा और सहज में इसकी संसार व संसार के सामानों से मुहब्बत टूट जावेगी। यही भक्तिमार्ग है और यही राधास्वामी दयाल का मार्ग है। राधास्वामी दयाल अपने चरणों में प्रीति क़ायम कराके जीव को संसार के मोहजाल से छुड़ाते हैं इसीलिये सत्संगी आम तौर पर सन्तुष्ट व प्रसन्न नज़र आते हैं। उनको पिछले ज़माने की सी काष्ठा झेले बग़ैर संसार के बन्धनों से रिहाई हासिल हो जाती है। मनुष्य को संसार में रहने की वासना ही ने संसार में बाँध रक्खा है। सतगुरुभक्तिद्वारा उसके अन्तर के अन्तर मालिक के चरणों में निवास हासिल करने की वासना दृढ़ हो जाती है और यह वासना उसे सृष्टि-नियमानुसार सहज में भवसागर से पार करके मालिक के चरणों में पहुँचा देती है।

बचन (८६)

हिन्दुस्तान में बहुत अर्से से यही परमार्थी तालीम रही है कि संसार मिथ्या है और इसके भोग बिलास सब झूठे हैं। चुनाँचे बहुत से परमार्थ से प्रेम रखने वाले अब भी

हर परमार्थी संस्था से यही आशा रखते हैं कि वह ऐसे मनुष्य पैदा करे जो संसार से मुँह मोड़कर त्याग की ज़िन्दगी बसर करें और सत्संग में आर्थिक संस्थाओं का प्रबन्ध उन्हें नागवार गुज़रता है। वाज़े हो कि सत्संग का भी यही उपदेश है कि संसार मिथ्या है और उसके भोग असार हैं लेकिन फ़र्क़ यह है कि सत्संग यह भी सिखलाता है कि जब तक किसी को संसार में रहना है तब तक उसके लिये संसार और उसके दुख सुख सत्य हैं। संसार असत्य इसलिये है कि यह जड़ है और इसमें क्षण क्षण परिवर्तन हो रहा है और इसके मुक़ाबिले हम चेतन व अविनाशी हैं। इसके भोग इसलिये झूठे हैं कि वे देर अबेर दुखदायी साबित होते हैं। हम सुरतरूप हैं और हमारा निज देश सच्चे मालिक का धाम यानी चेतन-देश है। वहीं पहुँचने पर हमारी सुरत को सच्ची आज़ादी और सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है। लेकिन चूँकि मुमकिन नहीं कि हम फ़ौरन् संसार से निकलकर उस देश में पहुँच जायँ इसलिये लाज़िम हो जाता है कि जब तक हमें इस संसार में रहना पड़े यहाँ के नियमों से वाक़िफ़ हो कर अपने दुखों में कमी और सुखों में इज़ाफ़े के लिये कोशिश करें अलबत्ता ख़्याल रक्खें कि यह कोशिश इसलिये नहीं की जाती कि संसार के सुख हमें दिल से भाते हैं बल्कि इसलिये कि जितने दिन यहाँ क़ैद काटनी लाज़िमी है उतने दिन नाहक़ दुख क्यों उठायें। आम लोग

संसार को मिथ्या कहकर और यहाँ के भोग विलास को झूठे मानकर आलसी हो जाते हैं लेकिन सत्संग की तालीम से आलस्य का रोग सत्संग-मण्डली के अन्दर घुसने नहीं पाता और सत्संगी अपना सब काम काज करता हुआ और नाहक़ के दुखों से बचता हुआ सच्चे सुख के स्थान में प्रवेश हासिल करने के लिये यत्न करता रहता है और एक दिन अधिकार पैदा होने पर सफलता को प्राप्त होता है।

बचन (९०)

सवाल जिज्ञासु का—सतगुरु को मत्था टेकने से क्या लाभ होता है ?

जवाब—यह एक रोज़ाना तजरुबे की बात है कि अगर रास्ता चलते कोई अजनबी आदमी हमारे पास से गुज़रता है तो हम कुछ ध्यान नहीं देते लेकिन अगर मालूम हो जाय कि वह हमारा अज़ीज़ है तो हम फ़ौरन् ख़ास तवज्जुह के साथ उसकी तरफ़ मुख़ातिब होते हैं और उसके साथ यथायोग्य बर्ताव करते हैं और अगर वह हमारा बुज़ुर्ग है तो हम फ़ौरन् प्यार व अदब से झुक जाते हैं। ऐसे ही जब किसी को बड़ी तलाश करने पर सतगुरु मिल जाते हैं और साधन करने पर मेहर से उसको उनकी पहिचान आ जाती है तो वह मारे प्रेम के उनके चरणों में लिपटने की इच्छा करता है और उसका ऐसा करना क़ुदरती बात है

और ऐसा करने पर उसे कमाल दर्जे की खुशी व शान्ति प्राप्त होती है लेकिन जो लोग सिर्फ़ दूसरों की देखादेखी ऐसा करते हैं उन्हें इस तरह का तजरुवा नहीं होता। किसी प्रेमी के अपने प्रीतम से मिलने पर, किसी लोहे के टुकड़े के चुम्बक से स्पर्श करने पर या किसी छोटे बच्चे के अपनी विछुड़ी माता के सम्मुख आने पर क्या हालत होती है इसका बयान में लाना कठिन है। यह बात ज़ाती तजरुबे ही से समझ में आ सकती है।

बचन (९१)

सत्संग के अन्दर जितनी भी बहिर्मुखी काररवाइयाँ जारी हैं उन सब का उद्देश्य यही है कि जिज्ञासु के दिल में सच्चे मालिक व सतगुरु के लिये प्रेम पैदा हो। जैसे संसार के सामानों का यही काम है कि इन्सान की तवज्जुह अपनी तरफ़ खींच कर उसके दिल में संसार की प्रीति पैदा करें ऐसे ही सत्संग की सब बहिर्मुखी काररवाइयाँ मसलन् दर्शन, बचन, प्रसाद वग़ैरह जिज्ञासु के दिल में सच्चे मालिक व सतगुरु के लिये प्रीति पैदा कराती हैं। जब किसी जिज्ञासु के दिल में सच्चे मालिक व सतगुरु के लिये प्रीति पैदा हो जाती है तभी वह अन्तर्मुखी क्रियाओं यानी सुमिरन ध्यान व भजन के लिये अधिकारी बनता है। मतलब यह है कि सत्संग की सब बहिर्मुखी काररवाइयों का उद्देश्य जिज्ञासु को अन्तर्मुख करना है।

वचन (९२)

लोगों का यह ख्याल है कि संसार की किसी वस्तु या संसार के किसी जीव से सदास्थायी प्रीति की जा सकती है। जैसे छोटे बच्चे खिलौना देखकर पूरी तवज्जुह के साथ उसकी तरफ़ दौड़ते हैं और उससे दिल बहलाते हैं लेकिन थोड़ी देर बाद दिल भर जाने पर उसे फेंक देते हैं ऐसे ही उम्र पाये हुए लोग भी दूसरों या संसार की वस्तुओं के साथ थोड़ी देर प्रीति करके उकता जाते हैं और फिर उनसे मुँह फेर लेते हैं। जब कि मनुष्य का मन प्राकृतिक है और हर प्राकृतिक वस्तु में परिवर्तन आवश्यक है तो मन का हाल सदा एक समान कैसे रह सकता है?

मनुष्य ख़ास दशाओं व अवस्थाओं के प्रभाव की मौजूदगी में दूसरे मनुष्य या संसार की वस्तुओं से प्रीति बाँधते हैं और उन दशाओं व अवस्थाओं में परिवर्तन होते ही उनकी प्रीति ग़ायब हो जाती है। ऐसा देखने में आया कि जो माता अपने बच्चे को सुन्दर व हृष्ट पुष्ट देखकर उससे ज़बरदस्त प्रीति करती है उसके किसी असाध्य रोग से पीड़ित होकर सूख जाने पर उसकी मौत माँगने लगती है।

संसार की वस्तुओं के मुक़ाबिले मनुष्य की प्रकृति के संग विलास करने की रुचि ज़्यादा ठहराऊ है इसीलिये सच्चे परमार्थ में उस रुचि के नाश करने के लिये, जो मनुष्य के सांसारिक मोह की जड़ है, ज़्यादा ज़ोर दिया जाता है।

लोग डालियों के तराशने की फ़िक्र तो करते हैं लेकिन जड़ के काटने का ख्याल नहीं करते मगर हर मनुष्य की प्रकृति के संग भी प्रीति सदा क़ायम नहीं रह सकती। अगर ऐसा होता तो सृष्टि की कोई भी शक्ति मनुष्य के मोह अंग को नाश न कर सकती और मनुष्य के लिये मोक्ष का प्राप्त करना असम्भव रहता और सन्तों व महात्माओं का संसार में तशरीफ़ लाना निष्फल ठहरता। लेकिन असली सूरत यह है कि अक्सर मनुष्यों की प्रकृति के संग प्रीति नाश की जा सकती है और सत्संग में दया से यही इन्तिज़ाम है कि बाहरी उपदेश व अन्तरी तजरुबों द्वारा प्रेमी जनों के इस रोग का नाश करते हैं। संसार के मोह की जड़ कट जाने पर प्रेमी जन यों तो बदस्तूर हरा भरा दिखलाई देता हैं लेकिन दरअसल उसकी हालत एक कटे हुए वृक्ष की सी होती है और दिन बदिन उसकी हरियाली कम होती जाती है और उसके अन्दर संसार के मोह का नया ज़हर दाख़िल होने नहीं पाता। जिन प्रेमी जनों की ऐसी हालत हो गई है वे निहायत बड़भागी हैं। वे बेख़ौफ़ जीवन व्यतीत करें और मालिक का गुणानुवाद गावें।

बचन (६३)

अगर हम उन सब तदबीरों को, जिन्हें सृष्टि के शुरू से इन्सान अँधेरा दूर करने के लिये अमल में लाया,

और उन सब दिक़्क़तों को, जो उसने इस सिलसिले में बरदाश्त कीं, ख़्याल में लावें तो मालूम होगा कि इन्सान के लिये अँधेरा दूर करना कैसा मुश्किल है लेकिन जब सूर्य्य उदय होता है तो आप से आप हर अमीर व ग़रीब के घर से अँधेरा दूर हो जाता है, किसी को कुछ भी तरद्दुद नहीं करना पड़ता। आँखें खोलते ही अँधेरा ग़ायब दिखलाई देता है। इसी तरह सृष्टि के शुरू से आज तक मोक्ष हासिल करने के लिये इन्सान ने जो जो सख़्त तकलीफ़ें उठाईं और कठिन साधन किये उनको ख़्याल में लाने से मालूम होता है कि मोक्ष हासिल करना कैसा मुश्किल है लेकिन जब सन्तों, महात्माओं के संसार में तशरीफ़ लाने से रूहानियत का सूर्य्य उदय हो जाता है तो किसी भी शख़्स को ख़ास तरद्दुद करने की ज़रूरत नहीं रहती, सिर्फ़ आँखें खोल कर उनकी पहिचान करने की हाजत रह जाती है। इससे समझ में आ सकता है कि अगर राधास्वामी दयाल रूहानियत के सूर्य्य हैं और हमें उनकी सच्ची पहिचान आ गई है तो हमारे लिये मोक्ष हासिल करना कैसा आसान हो गया है।

बचन (९४)

दुनिया में वासनाओं की नदी बह रही है और हर शख़्स, बिला ख़्याल इस बात के कि उसके अन्दर क्या जा रहा है, दोनों हाथों से उसका पानी पी रहा है। जिस

शख़्स को किसी ऐसे पुरुष की शरण प्राप्त है जो गन्दगी को गन्दगी देखता व समझता है और सतह पर तैरती हुई गन्दगी को दोनों हाथों से हटाता रहता है ताकि उसके साथी गन्दगी निगलने से बच जावें, वही इस गन्दगी के ज़हर से बच सकता है। इसी क़ुदरती क़ानून के इस्तेमाल से सत्संग-मंडली आम तौर पर संसारी वासनाओं की गन्दगी से बची हुई है।

बचन (६५)

संसार में न दौलत की कमी है, न खाने पीने की चीज़ों की, कमी है तो इस बात की कि दुनिया की दौलत चन्द लोगों के हाथ में है और उसका बहाव ऐसा नहीं है कि वह हिस्सा रसदी सब तक पहुँच जाय, चुनाँचे हर क़ौम व मुल्क के समझदार लोग ऐसी तदबीरें निकालने में मसरूफ़ हैं कि यह कमी दूर हो जाय। सत्संग की तरफ़ से यह सलाह पेश की जाती है कि ऐ लोगो! दौलत की मोहब्बत कम करो। उसको सिर्फ़ काम चलाने का ज़रिया या औज़ार समझो। दौलत इकट्ठा होने से कोई सुख पैदा नहीं होता। दौलत के इस्तेमाल से अलबत्ता सुख के सामान हासिल हो जाते हैं लेकिन जो सुख उनकी माफ़र्त हासिल होता है न वह सच्चा है, न हमेशा क़ायम रहने वाला। सच्चा व सदा क़ायम रहने वाला सुख ख़ुद तुम्हारे

आत्मा में है। तुम आत्म-दर्शन को अपनी ज़िन्दगी का उद्देश्य बनाओ। दौलत पैदा करो और जब ज़रूरत से ज़्यादा दौलत हाथ आवे तो उसे मालिक के नाम पर निछावर करो। हर शख़्स को असली ज़रूरत सिर्फ़ इस क़दर दौलत की है कि उसे अपनी ज़िन्दगी का उद्देश्य यानी आत्म-दर्शन की प्राप्ति में काफ़ी सहूलियत मिले। जो दौलत मालिक के नाम पर निछावर की जावे वह सब की सब देश या जाति की बेहतरी के कामों पर सर्फ़ करो। इन बातों पर कुछ अर्से अमल करके देखो कि क्या नतीजा निकलता है। नतीजा यही होगा कि तुम ख़ुद सुखी रहोगे और तुम्हारे संगी साथी व देशवासी भी सुखी रहेंगे।

बचन (९९)

राधास्वामी-मत के साधन उस शख़्स के लिये हैं जो साधन किया चाहता है और स्थूल ज्ञानेन्द्रियों से परे के घाटों का ज्ञान हासिल करने का शौक़ रखता है। जो लोग विश्वास रखते हैं कि स्थूल ज्ञानेन्द्रियों की मार्फ़त प्राप्त ज्ञान के अलावा और कोई ज्ञान ही नहीं है वे ग़लती पर हैं। कौन नहीं जानता कि ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान हमेशा सही नहीं होता। सैकड़ों आदमियों को अँधेरे में भूत दिखलाई देने लगता है और फ़ासले पर

चमकता हुआ रेत पानी नज़र आता है। वैज्ञानिक पुरुषों के बेशुमार दावे ग़लत साबित हो चुके हैं। बावजूद इन सब बातों के महज़ स्थूल ज्ञानेन्द्रियों के भरोसे बैठे रहना अगर ग़लती नहीं तो क्या है? लेकिन इसके यह मानी नहीं हैं कि आज से हर शख़्स अपनी स्थूल ज्ञानेन्द्रियों से काम लेना बन्द कर दे। मतलब यह है कि उनसे काम ज़रूर लिया जावे लेकिन उनसे चढ़कर और बेहतर ज्ञान प्राप्त कराने वाली सूक्ष्म व चेतन ज्ञानेन्द्रियों को भी जगाने की फ़िक्र की जावे। राधास्वामी-मत के साधन इस फ़िक्र के पैदा होने पर काम आते हैं।

वचन (६७)

बाज़ लोग सतगुरु की महिमा सुनकर घबरा जाते हैं। वजह यह है कि उन्हें मालूम नहीं है कि सतगुरुगति किसे कहते हैं। जैसे ताँबे की तार देखने में एक मामूली व कम-हैसियत चीज़ है लेकिन चूँकि उसमें यह गुण है कि उस पर बिजली की धार बआसानी रवाँ हो सकती है इसलिये यह तार एक बड़ी कारआमद (काम की) व बेशक़ीमत चीज़ बन जाती है। ताँबे की तार पर रवाँ होकर बिजली हमारे सैकड़ों काम करती है। हमारे घरों से अँधेरा दूर करती है, पानी खींचती है और हमें बेहद मेहनत व तकलीफ़ से बचाती है। इसी तौर पर हरचन्द सतगुरु देखने

में साधारण पुरुष होते हैं लेकिन चूँकि उनमें यह गुण होता है कि उनकी सुरत या आत्मा का सच्चे मालिक की परम चेतनधार से बराहेरास्त मेल रहता है इसलिये मनुष्यों को उनके द्वारा बेशुमार लाभ प्राप्त होते हैं:—उनके घट का अन्धकार दूर होता है, अन्तर में अमृतरस प्राप्त होता है और काल और कर्म के अनेक दुःखों से रिहाई मिलती है। इस वजह से सतगुरु संसार में एक दुर्लभ रत्न क़रार पाते हैं।

बचन (६८)

यह स्थूल देश सुरत का निज देश नहीं है। यह देश उस मसाले का बना है जिससे हमारा स्थूल शरीर तय्यार हुआ है। हमारी सुरत अपनी चेतनता सर्फ़ करके यहाँ के मसाले को जान देती है वरना यह बिल्कुल जड़ है। इसी मानी में इसको खारी पानी का सागर कहा जाता है। जब से मनुष्य ने इस देश में क़दम रक्खा है बराबर कोशिश हो रही है कि इस देश को सुख का सागर बनाया जावे। मनुष्य ने इस अर्से में तरह तरह की ईजादें भी कीं और तरकीबें भी निकालीं जिनकी वजह से क़िस्म क़िस्म की तहज़ीबें ज़हूर में आईं और मुख़्तलिफ़ नमूनों की हुकूमतें क़ायम हुईं लेकिन इसके खारीपन में ज़रा भी फ़र्क़ नहीं आया और यहाँ की तकलीफ़ें बराबर तरक़्क़ी कर रही हैं।

यह हालत देखकर हर समझदार मनुष्य को फ़र्ज़ हो जाता है कि निर्मल चेतन देश में, जो हमारी सुरत का निज देश है, पहुँचने की फ़िक्र करे। वहाँ पहुँचने ही पर सुरत को अपने निज अंगों में वरतने और सच्चा सुख भोगने का मौक़ा मिलेगा।

वचन (६६)

अगर इन्सान आँख खोलकर देखे तो उसे सहज में समझ आ जाय कि वह कोई नई चीज़ पैदा नहीं कर सकता। वह सिर्फ़ यह कर सकता है कि मालिक की पैदा की हुई चीज़ों की जोड़ तोड़ करके उन्हें अपने लिये मुफ़ीद बना ले। अक़्लमन्द सृष्टिनियमों का मुताला करके उनसे काम लेते हैं। इन्सान ने जितने पदार्थ कलाकौशल से तैयार किये हैं वे इसी तरीक़े से किये हैं। रेलगाड़ी, तारबर्क़ी, हवाई-जहाज़ इन्सान की बनाई हुई चीज़ें हैं लेकिन इनके अन्दर लोहा, पीतल, लकड़ी वग़ैरह जो कुछ लगता है वह सब और उनके चलाने के लिये जो कोयला, तेल, पानी वग़ैरह इस्तेमाल होते हैं वे सब मालिक ही की क़ुदरत के पैदा किये हुए हैं। यह बात समझ में आ जाने पर किसी के लिये यह मान लेना मुश्किल न होना चाहिये कि इसको मोक्ष दिलाने के लिये भी मालिक ही की जानिब से सब सामान मुहय्या होते हैं। अक़्लमन्द इन सामानों

से वाक़िफ़ होकर फ़ायदा उठाते हैं और दूसरों को फ़ायदा उठाने का मौक़ा देते हैं लेकिन मूर्ख अहंकारवश उनकी जानिब तवज्जुह नहीं करते और उनके फ़ायदे से महरूम (ख़ाली) रहते हैं।

बचन (१००)

बहुत से लोग कहते हैं कि व्यासजी ने वेदान्त शास्त्र रचकर संसार को निहाल किया, सो दुरुस्त है और बाज़ कहते हैं कि जिस विद्या का व्यासजी ने उपदेश किया, जर्मन फ़िलासफ़र कैंट ने उसको सम्पूर्ण यानी मुकम्मिल किया, यह ज़रा बढ़की बात है। इतना ज़रूर है कि कैंट ने वैज्ञानिक रीति से विचार करके वेदान्त की शिक्षाओं की ख़ूब पुष्टि की है लेकिन दोनों के उपदेश विचार ही की हद के अन्दर रहे। मगर हुज़ूर राधास्वामी दयाल ने सुरतशब्द अभ्यास की युक्ति प्रकट करके जीवों को वह तरीक़ा बतलाया जिसके ज़रिये वेदान्त की तालीम की असली व सच्ची जाँच हो सकती है। बिला ऐसी जाँच व आज़मायश के दोनों का उपदेश कच्चा ही था। इसके बग़ैर इन्सान तहक़ीक़ तौर पर नहीं जान सकता था कि सुरत या आत्मा सच्चे मालिक का अंश है और अंशी व अंश में भेद नहीं है और यह जगत् मिथ्या व भ्रममात्र है। दलीले अक़्ली से सिर्फ़ नतीजा निकाला जा सकता है लेकिन

प्रत्यक्ष ज्ञान हासिल नहीं होता, प्रत्यक्ष ज्ञान के लिये आध्यात्मिक साधन लाज़िमी है।

वचन (१०१)

अगर किसी मनुष्य की सुरत के ऊपर से सब के सब शारीरिक व मानसिक ख़ोल उतार दिये जावें तो नतीजा यह होगा कि उसकी सुरत हर प्रकार के शारीरिक व मानसिक दुखों से, स्थूल व सूक्ष्म शक्तियों के असरों से और शरीर व मन की सभी क़ैदों से आज़ाद होकर अपने निर्मल चेतन स्वरूप में प्रकट हो जायगी और बेरोक अपने असली अंगों यानी सत्ता, चेतनता और आनन्द वग़ैरह में बरतने लगेगी और अगर उस वक़्त उस सुरत का सच्चे मालिक से, जो सुरतशक्ति का भंडार है, वस्ल हो जाय तो उसकी वही हालत हो जायगी जो मिट्टी से अलहदा होकर समुद्र में पहुँच जाने पर पानी के क़तरे की होती है। यह दुरुस्त है कि पानी का क़तरा समुद्र नहीं है और उसमें समुद्र की सी शान नहीं है लेकिन बलिहाज़ जौहर के दोनों एक ही हैं और समुद्र से मिलने पर क़तरा समुद्ररूप हो जाता है। इसी लिये कहा जाता है कि मालिक से मिलने पर सुरत मालिकरूप हो जाती है। जिस महापुरुष को यह गति जन्म से प्राप्त रहती है उसको सन्त अथवा राधास्वामी-मत में अवतार पुरुष मानते हैं और जो जन्म लेने के बाद

साधन करके इस गति को प्राप्त होते हैं उन्हें गुरुमुखसन्त कहते हैं। ऐसे महापुरुष केवल जीवों की सहायता के निमित्त संसार में तशरीफ़ लाते हैं और क़याम करते हैं। जो शख़्स उनकी सी गति हासिल किया चाहता है मुनासिब है कि वह खोज करके उनकी शरण इख़्तियार करे और उनकी आज्ञा के अनुसार साधन करके अपनी अभिलाषा पूरी करे।

बचन (१०२)

दुनिया का पुराना इतिहास पढ़कर और मौजूदा ज़माने की हालत देखकर सन्तों के इस बचन की पूरे तौर से तसदीक़ हो जाती है कि यह दुनिया दुख का सागर है, इसको अपना वतन नहीं बनाना चाहिये। इन्सान कोशिश करके अपने कुछ दुख दूर कर सकता है और कुछ में कमी कर सकता है लेकिन वह संसार को सुखस्थान किसी हालत में भी नहीं बना सकता। इसलिये हमपर फ़र्ज़ होता है कि सब काम काज करें और सुख से ज़िन्दगी बसर करने के लिये पूरी कोशिश करें लेकिन दुनिया को अपना वतन बनाने का ख़्याल कभी दिल में न लावें। हमारा वतन निर्मल चेतन-देश यानी सच्चे मालिक का धाम है। हमारी आँख उसी जानिब लगी रहनी चाहिये।

बचन (१०२)

लोग पूछते हैं कि आदि में यानी रचना होने से पहले सुरत और मालिक की एकता किस तरीक़े से क़ायम थी यानी यह जो कहा जाता है कि आदि में सुरत मालिक से अभिन्न थी तो उस वक़्त सुरत का क्या स्वरूप था ? अगर उस वक़्त सुरत व मालिक एक हो रहे थे तो मानना होगा कि रचना होने पर मालिक के टुकड़े हो गये। जवाब यह है कि जो बुद्धि इस वक़्त सवाल करती है और रचना से पहले का भेद समझा चाहती है वह खुद रचना होने के बाद प्रकट हुई है यानी वह ऐसे मसाले की बनी है जिस पर रचना का अमल काम कर चुका है इसलिये इस बुद्धि में यह क़ाबिलियत नहीं है कि रचना से पहले की अवस्था का ठीक ठीक अनुमान कर सके। इसके ज़रिये रचना की मौजूदा हालत ही समझी जा सकती है। रचना से पहले की अवस्था का हाल समझने के लिये हमें वह बुद्धि इस्तेमाल करनी होगी जिसपर रचना का अमल असर नहीं डाल सका और वह चेतन बुद्धि है जो सुरत की ज्ञानशक्ति है। लेकिन चूँकि मन इन बातों से शान्त नहीं होता और बावजूद अपने अन्दर अपने से बरतर मसाले की हालत समझने की क़ाबिलियत न रखने के हर बात जान लेने का शौक़ीन है इसलिये सन्तों ने फ़रमाया कि रचना से पहले

कुलमालिक व सुरत में वही रिश्ता क़ायम था जो समुद्र और पानी की बूँद में या सूरज और सूरज की किरण में होता है। इस मिसाल से जो लोग यह ख़्याल नहीं रखते कि मिसाल का सिर्फ़ एक ही पहलू या अङ्ग लिया जाता है भ्रम उठाते हैं कि रचना होने पर मालिक टुकड़े टुकड़े हो गया। उन्हें याद रखना चाहिये कि न मालिक पानी का समुद्र है और न सुरत पानी की बूँद। इस दृष्टान्त से सिर्फ़ मालिक व सुरत की अभिन्नता दिखलाना मुतसव्विर है। इस सिलसिले में एक दूसरी मिसाल भी दी जा सकती है जो शायद मालिक व सुरत के रिश्ते को ज़्यादा साफ़ तौर से अदा करती है। कहते हैं कि जब कृष्ण महाराज अपनी बाँसुरी बजाते थे तो उनका दर्शन करती हुई और बाँसुरी की आवाज़ सुनती हुई हज़ारों गोपियाँ महव हो जाती थीं और उनको अपनी अनानियत की सुध न रहती थी लेकिन बाँसुरी बन्द होने पर सब अपने आपे में आ जातीं और अपने अपने धन्दों में मसरूफ़ हो जाती थीं। इसलिये कह सकते हैं कि रचना होने पर सुरतें, जो कि रचना होने से पहले मालिक में रत थीं और मालिक के साथ एक हो रही थीं, बाँसुरी बन्द होने पर गोपियों की तरह जुदागाना मशग़लों में मसरूफ़ हो गईं।

बचन (१०४)

हर कोई जानता है कि हमारी हर एक कारवाई का नतीजा किसी न किसी क़िस्म के सुख या दुख की प्राप्ति है। पिछले वक़्तों में इन्सान की ज़रूरियात कम और ज़िन्दगी की ज़रूरियात के मुतअल्लिक़ सामान ज़्यादा रहने से उसके सुख ज़्यादा थे और दुख कम। इस वजह से उन दिनों लोग आम तौर सुखों में मस्त रहते थे और सच्चे परमार्थ के लिये बहुत कम लोगों को फ़ुर्सत मिलती थी। आजकल ज़रूरियात में ज़बरदस्त इज़ाफ़ा हो जाने से इन्सान के दुखों में ज़बरदस्त इज़ाफ़ा हो गया है। हर शख़्स उनसे छुटकारा पाने की फ़िक्र में है। इसलिये लोगों को सच्चे परमार्थ के लिये फ़ुर्सत का मिलना कठिन हो रहा है यानी पिछले वक़्तों में सुखों की ज़्यादती और इस वक़्त दुखों की ज़्यादती से लोग सच्चे परमार्थ की कमाई से महरूम हैं। हुज़ूर राधास्वामी दयाल का वचन है—आज कल के दुःखों में ९५ फ़ीसदी या तो मानन के दुःख हैं या ग़लत समझौती के कारण पैदा होते हैं। इसी वजह से सत्संग में चार तरह की कोशिश जारी है। अव्वल यह कि उपदेश द्वारा लोगों को दुरुस्त समझौती दी जावे। मसलन् अक्सर लोग अपने शरीर या अपनी औलाद में बन्धन के कारण दुखी दिखलाई देते हैं। ज़ाहिर है इन लोगों ने दुरुस्त समझौती न मिलने के कारण अपने शरीर व

औलाद् में बन्धन क़ायम कर रक्खा है। सत्संग के उपदेश सुनने से लोगों के ख़्यालात में तब्दीली हो कर ये बन्धन छूट जाते हैं और उनसे उत्पन्न होने वाले दुख नष्ट हो जाते हैं। दोयम् यह कि रूहानी शक्तियों को जगा कर और अन्तरी तजरुबों की मदद् से मुतलाशी को दुनिया के सुखों व दुखों की असलियत और दुनिया के सामान की बद्-हैसियती द्रसाई जावे। सोयम् यह कि दुनिया की ज़रूरियात के मुतअल्लिक़ मुनासिब इन्तिज़ाम व संस्थाएँ क़ायम करके दुखी या हाजतमन्द् सत्संगियों की मुनासिब मदद् की जावे और चहारम् यह कि परमार्थ की महिमा और परमार्थी निशाने की महत्ता चित्त में बसा कर उन्हें दुनिया से किसी क़द्र बेनियाज़ कराया जावे। ज़ाहिर है कि अगर दया से इन कोशिशों का सिलसिला बराबर जारी रहा और सब सत्संगी सच्चे दि्ल से अपने अपने धर्मों का पालन करते रहे तो एक दि्न ऐसा आयेगा कि सत्संग में बहुत ही कम दुखी लोग रह जायँगे और उनकी ज़िन्द्गी का भी बेशतर हिस्सा दुखों से पाक रहेगा।

बचन (१०५)

बाज़ लोग कहते हैं कि स्त्री-चोला योगसाधन के क़तई नाक़ाबिल है। उनका यह कथन क़तई नादुरुस्त है। अगर स्त्री-चोले में सुरत-शब्द्-अभ्यास की कमाई मुमकिन न

होती तो राधास्वामी दयाल हर्गिज़ स्त्रियों को इस अभ्यास का उपदेश न फ़रमाते। इसके अलावा हज़ारों ऐसी ज़िन्दा मिसालें मौजूद हैं कि स्त्रियों ने इस अभ्यास के साधनों से पूरा फ़ायदा हासिल किया है। जिस वचन को बिगाड़ कर स्त्री-चोले की मज़म्मत की जाती है वह यह है कि राधास्वामी दयाल या निर्मल चेतन देश के किसी दूसरे धनी की धार स्त्री-चोला इख़्तियार नहीं कर सकती क्योंकि यह चोला उनके अवतार लेने के नाक़ाबिल है। लेकिन इसके यह मानी नहीं हैं कि स्त्रियाँ सुरत-शब्द-योग के साधनों से कोई फ़ायदा नहीं उठा सकतीं। सच पूछो तो पहले ज़ीने पर क़दम रखने के लिये स्त्रीचोला ज़्यादा मौज़ूँ है। क्योंकि पहला ज़ीना भक्ति का है और स्त्रियाँ आम तौर भक्तिमती और पुरुष संशयात्मक होते हैं। इसके अलावा ख़्याल करना चाहिये कि जब मालिक की तरफ़ से पुरुषों व स्त्रियों के लिये हवा, पानी, रोशनी वग़ैरह के इन्तिज़ाम यकसाँ हैं तो यह कैसे उम्मीद की जा सकती है कि उद्धार या जीव के कल्याण के बारे में मालिक ने दुभाँति बरती हो। हुज़ूर राधास्वामी दयाल का वचन है:—

शब्द

गुरु प्यारे करें आज जगत उद्धार। टेक।

जीवन को अति दुखी देख कर, उमँगी दया जाका वार न पार। १।

नररूप धर जग में आये, भेद सुनाया घर का सार। २।

दीन होय जो चरनन लागे, उन जीवन को लिया सम्हार । ३ ।
बाक़ी जीव जन्तु पर जग में, मेहरदृष्टि करी गुरु दयार । ४ ।
जस तस उनका काज बनाया, अपनी दया से किरपा धार । ५ ।
कोई जीव ख़ाली नहिं छोड़ा, सब पर मेहर की दृष्टी डार । ६ ।
कुल मालिक राधास्वामी प्यारे, जीव जन्तु सब लीन्हे तार । ७ ।
कौन सके उन महिमा गाई, शेष महेश रहे सब हार । ८ ।
दोउ कर जोर करूँ मैं बिनती, शुकर करूँ मैं बारम्बार । ९ ।
राधास्वामीसम समरथ नहिं कोई, राधास्वामी करें अब दया अपार ।१०।
मैं बालक उन सरनअधीना, चरन लगाया मोहिं कर प्यार ।११।

बचन (१०६)

पाँच बातें हर प्रेमी जन को भली प्रकार समझ लेनी चाहियें—अव्वल यह कि अगर हमारे शरीर से वे सब चीज़ें ख़ारिज कर दी जावें, जो तब्दील होने वाली हैं, तो आख़िर में जो एकरस क़ायम रहने वाला जौहर रह जाता है वही हमारा निज आपा, हमारी जान और हमारी सुरत या रूह है। दोयम् यह कि इस जौहर का मख़ज़न या भंडार यानी वह कुल, जिसका यह जुज़ है, सच्चा मालिक है और उसी को राधास्वामी दयाल कहते हैं। सोयम् यह कि जैसे पानी का हर क़तरा क़ुदरतन् अपने भंडार यानी समुद्र में वापस जाया चाहता है वैसे ही हर रूह का रुख़ भी अपने भंडार यानी सच्चे मालिक की जानिब है। चहा-रम् यह कि न सिर्फ़ रूहों के अन्दर सच्चे मालिक से वस्ल

हासिल करने का शौक़ है बल्कि वह सच्चा मालिक भी आरज़ूमन्द है कि तमाम रूहें उसकी आग़ोश (गोद) में आ जावें और पंजम् यह कि मालिक की जानिब से यह इन्तिज़ाम है कि वक्त मुनासिब पर उससे रूहानी धार प्रकट हो कर पृथ्वी पर उतरती है और सतगुरुरूप धारण करके जीवों को निज भंडार से वस्ल हासिल करने का तरीक़ा सिखलाती है और जो सुरतें आमादह होती हैं उन्हें वस्ल हासिल करने में पूरी मदद देती है। जिस किसी को भाग्य से ऐसे सतगुरु मिल जावें उसे चाहिये कि उनकी शरण लेकर अपना काम बनावे।

दोहा

नारि पुरुप सब ही सुनो बहूमूल्य यह भेद।
प्रेमसहित गुरुदरश से मिटें सकल जिवखेद॥

वचन (१०७)

संसार में दो विरोधी विचारों का प्रचार हो रहा है। एक तो इस विचार का कि मनुष्य आज़ाद रहे, अपनी ज़रूरतों को ज़्यादा न बढ़ावे और मोटा झोटा खा व पहन कर गुज़ारा करे किसी दूसरे के रूबरू हाजतमन्द बन कर न जावे और स्वतन्त्रता का आनन्द ले। दूसरे इस विचार का कि मनुष्य अमीरों, हाकिमों और गुणवानों से मेल जोल रक्खे और उनको प्रसन्न करे ताकि मौक़ा पड़ने पर उनकी

दौलत व हुकूमत से और उनके गुणों से मदद हासिल करके सुख के साथ ज़िन्दगी बसर कर सके। ये दोनों ही विचार दुरुस्त हैं और दोनों ही मनुष्य को आराम पहुँचाने वाले हैं लेकिन आम लोग इन विचारों का सही इस्तेमाल नहीं करते। चुनाँचे अक्सर ऐसे आदमी दिखलाई देते हैं जो आज़ाद तो रहते हैं लेकिन ज़बान के ऐसे कड़वे और स्वभाव के ऐसे ख़राब हैं कि कोई शख़्स उनसे मिलना नहीं चाहता। दूसरी तरफ़ ऐसे आदमी मिलते हैं जो परले दर्जे के ख़ुशामदी हैं और झूठ बोलते वक़्त न मालिक का ख़ौफ़ दिल में लाते हैं और न अपनी इज़्ज़त आबरू का। बढ़ाकर बातें सुनाना और धोखे व फ़रेब से काम निकालना उनका दस्तूरुल् अमल है। ये दोनों क़िस्म के लोग असली विचारों से गिर गये हैं। राधास्वामी दयाल का उपदेश यह है कि मनुष्य स्वाधीन भी रहे और दीन अधीन भी यानी आज़ाद भी रहे और ज़बान व स्वभाव का मीठा भी। जैसा कि फ़रमाया है—दीन ग़रीबी मत इस जुग का, और गुरुभक्ती कर परमान।

बचन (१०८)

हर इन्सान शुरू में छोटा बच्चा होता है और दर्मियानी मंज़िलें तय करके चालीस पचास वर्ष की उम्र में

सयाना आदमी बनता है। यही हाल जमाअतों का भी है। चुनाँचे हमारी सङ्गत भी इस वक़्त बचपन की हालत में है और जैसे सयाना होने पर इन्सान का तजरुबा पुख़्ता, उसकी अक़्ल साफ़ और रहनी गहनी क़ाबिले ऐतबार हो जाती है ऐसे ही जमाअतों के उम्र पा लेने पर उनके मेम्बरों के तजरुबे और अक़्ल में ख़ुशगवार तब्दीली हो जाती है। हालते मौजूदा में यानी जब कि हमारी सङ्गत बचपन की हालत में है सत्संगियों से जब तब ग़लतियों का बन पड़ना या कमज़ोरियों का ज़हूर में आना कोई बड़ी बात नहीं है लेकिन साथ ही याद रखना चाहिये कि इस वक़्त ज़रूरत इस बात की है कि सब सतसंगी और ख़ासकर बढ़के समझदार मिल कर कोशिश करें कि इस बच्चे की तन्दुरुस्ती व तरक़्क़ी में कोई विघ्न न आने पावे। जवान होने पर यह बच्चा सत्संगियों की उम्मीद से बढ़ कर सेवा करेगा और ख़ुशी से उनके आराम व आसायश का बोझ अपने सिर पर लेगा।

बचन (१०६)

दुनिया में मुक्ति हासिल करने के लिये बहुत से तरीक़े जारी हैं जो मुख़्तलिफ़ वक़्तों पर मुख़्तलिफ़ बुज़ुर्गों ने प्रकट किये। उनमें से एक भक्तिमार्ग भी है। यह मार्ग दूसरे तरीक़ों से ज़्यादा रसीला है और आम तौर मशहूर है कि

सबसे आसान है। चुनाँचे इस देश में इस मार्ग के अनुयायी करोड़ों की तादाद में मिलते हैं। कृष्ण के उपासक, राम के भक्त, मुसलमान और ईसाई सभी भक्तिमार्ग के श्रद्धालु हैं। इस मार्ग के सुगम होने में शुबह नहीं है बशर्तेकि दो बातों का भली प्रकार लिहाज़ रक्खा जावे। अव्वल इस बात का कि प्रेमीजन हर काम में अपने भगवन्त की प्रसन्नता मुख्य रक्खे यानी वह किसी ऐसे काम को हाथ न लगावे जो उसके भगवन्त की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ हो चाहे वह कितने ही नफ़े का काम क्यों न हो और दूसरे लोगों को प्रिय हो। दूसरे लोग बेशक वह काम करें और नफ़ा उठावें लेकिन उसके दिल में उसके लिये ख़्याल तक न उठे और अगर उसने कोई काम शुरू कर दिया है और वह ठीक चल रहा है लेकिन अब वह उसके भगवन्त को पसन्द नहीं है तो मुनासिब है कि नफ़ा नुक़्सान का ख़्याल छोड़ कर उसे फ़ौरन् बन्द कर दे और अपने मन के बहकाने और लोकलाज की परवा न करे। दोयम् इस बात का कि जब प्रेमीजन कोई काम सेवा की ग़रज़ से करे तो उसमें अपने स्वार्थ का ख़्याल दिल में न लावे यानी सेवा हमेशा निष्काम रह कर करे। इन दोनों बातों का लिहाज़ रखने ही से भक्तिमार्ग फलदायक हो सकता है। भगवन्त की प्रसन्नता का ख़्याल छोड़ कर या स्वार्थ का ख़्याल दिल में ला कर जो काम किया जाता है वह सब

अपने मन की गुलामी है। जो लोग भगवन्त की प्रसन्नता मुख्य रख कर काम करते हैं और स्वार्थ का ख़याल छोड़कर सेवा करते हैं, उन्हें भगवन्त की जानिब से दो क़िस्म के परचे मिलते हैं। अव्वल अन्तर में भगवन्त के दर्शन और दोयम् परमार्थ और स्वार्थ में कमाल दर्जे की सहूलियत। जिन भक्ति-मार्ग पर चलने वालों को ये परचे न मिलें तो वे समझ लें कि उनकी भक्ति में कसर है। अपने भगवन्त की प्रसन्नता को मुख्य रख कर हर काम करना, सेवा करते वक़्त किसी स्वार्थी ग़रज़ को मन में न आने देना, सेवा सिर्फ़ भगवन्त की प्रसन्नता हासिल करने की ग़रज़ से करना और जवाब में भगवन्त की प्रसन्नता और दया व मेहर के परचे पाकर हँसते खेलते संसार सागर से पार हो कर अपने भगवन्त राधास्वामी दयाल के चरणों में समा जाना ही राधास्वामीमत है।

वचन (११०)

राधास्वामीमत में इस बात पर बहुत ज़ोर दिया जाता है कि मनुष्य-शरीर बड़ा दुर्लभ व बेशक़ीमत है और बड़े भाग्य से प्राप्त होता है। वजह यह है कि इस शरीर की मारफ़त अगर जीव चाहे तो नीचे से नीचे दर्जे में उतर सकता है और अगर चाहे तो ऊँचे से ऊँचे मुक़ाम पर पहुँच सकता है यानी उसके लिये मौक़ा है कि चाहे पशु,

पक्षी, वनस्पति वग़ैरह योनियों से हो कर जड़ खान में उतर जाय या देवता, हंस, परमहंस की गति प्राप्त करके सच्चे मालिक से मिलकर तद्रूप हो जाय। ऐसा दुर्लभ व बेशक़ीमत शरीर पाकर अगर लोग उससे सिर्फ़ हैवानी ख़्वाहिशें पूरा करने का काम लें तो यह ऐसा ही है जैसा कि कोई हीरे जवाहिरात या पारस पत्थर से तेल तौलने का काम ले। हर मनुष्य को चाहिये कि अपने शरीर का मुनासिब इस्तेमाल करके ऊँची से ऊँची रूहानी गति हासिल करे। मनुष्य-जन्म सफल करने का यही तरीक़ा है।

बचन (१११)

राधास्वामीमत भक्तिमार्ग है। राधास्वामीमत में भगवन्त को छोड़ कर बाक़ी जितने भक्ति के लवाज़मे हैं सब को निचला दर्जा दिया गया है। अगर किसी का भगवन्त ठीक नहीं है या अगर ठीक है लेकिन उससे ठीक तरह सम्बन्ध क़ायम नहीं किया गया और दिल में मनमाने ख़्यालात उठा कर भक्ति की जा रही है तो चाहे कितना भी जप तप किया जावे, कितनी भी भीड़ भाड़ जमा हो जावे और कितना भी रुपया भक्ति के कामों पर सर्फ़ किया जावे असली फल कभी प्राप्त न होगा। जो लोग राधास्वामी दयाल की चरण शरण इख़्तियार करते हैं उन्हें सच्चे मालिक का इष्ट बँधवाया जाता है और उनका सच्चे

मालिक की चरणाधार से हर वक्त सम्बन्ध क़ायम रहता है इसलिये उनका भगवन्त भी ठीक है और भगवन्त से सम्बन्ध भी ठीक तौर क़ायम है।

बचन (११२)

दुनिया में आम तौर पर रिवाज यह है कि इन्सान मालिक की जानिब मुख़ातिब ही नहीं होता। अलबत्ता जब किसी के सिर पर सख़्त मुश्किल या मुसीबत आती है तो वह मालिक की तरफ़ मुख़ातिब होता है और बतौर भिखारी के मालिक के रूबरू हाथ फैलाता है। ख़ैर किसी भी बहाने से मालिक की याद की जावे ग़नीमत है। लेकिन मालूम होवे कि इस तरीक़े से मालिक की याद करने पर हमेशा दया व मदद हासिल नहीं होती। एक ऐसा भी तरीक़ा है जिस पर चलने से बिलानाग़ा दया व मेहर हासिल हो सकती है और वह यह कि भिखारी के बजाय बच्चे का अङ्ग लेकर प्रार्थना की जावे और जैसे बच्चा अपनी माँ से मोहब्बत के ज़ोर पर चीज़ें माँगता है ऐसे ही तुम भी अपनी प्रार्थना पेश करो। लेकिन यह अङ्ग तभी आवेगा जब अपने मन को बच्चे की तरह निष्पाप बनाओगे और बच्चे की तरह मालिक से दिनरात मोहब्बत करने की आदत डालोगे। जब ऐसी आदत हो जावेगी तो अव्वल तो तुम्हें किसी चीज़ के माँगने की ज़रूरत ही न रहेगी

क्योंकि वह दयाल मालिक खुद ही तुम्हारी हर तरह निगरानी व सँभाल करेगा और दोयम् अगर कभी ज़रूरत भी पड़ेगी तो तुम्हारे माँगते माँगते उसकी मंजूरी के अहकाम जारी हो जावेंगे। अगर राधास्वामीमत और राधास्वामी दयाल में सच्चा विश्वास है तो इस युक्ति का इस्तेमाल करके पूरा फ़ायदा उठाओ।

बचन (११३)

मालिक ने दुनिया में इन्सान की ज़िन्दगी खुशगवार बनाने और उसे तरक़्क़ी का मौक़ा देने के लिये अपनी क़ुदरत से चन्द ऐसे सामान पैदा किये हैं जिनका खुद मुहय्या करना उसके लिये नामुमकिन है। मसलन् रोशनी, पानी, रूहानियत वग़ैरह। और जैसे रोशनी मुहय्या करने के लिये मालिक की जानिब से सूरज तैनात हुआ है, पानी के लिये समुद्र, ऐसे ही रूहानियत मुहय्या करने के लिये साध सन्त, फ़क़ीर औलिया, ऋषि मुनि वग़ैरह तैनात किये गये हैं। अगर आज सूरज ग़ायब हो जाय या समुद्र खुश्क हो जाय तो थोड़े ही अर्से में दुनिया का ख़ात्मा हो जायगा। ऐसे ही अगर साध सन्तों की आमद बन्द हो जाय तो थोड़े ही अर्से में दुनिया से इन्सानियत उठ जायगी और तरक़्क़ी और सच्चे सुख की प्राप्ति का रास्ता हमेशा के लिये बन्द हो जायगा। मगर तअज्जुब व अफ़सोस है कि आम तौर

लोग इस नेमत का पूरा फ़ायदा नहीं उठाते और जैसे कि लकड़ी के कोयले के अन्दर मौजूद सूरज की ख़फ़ीफ़ क़ुव्वत से काम चलाया जाता है ऐसे ही सन्त महात्माओं की लिखी हुई पुस्तकों, उनकी इस्तेमाली चीज़ों और उनके निशानात में मौजूद ख़फ़ीफ़ रूहानियत से फ़ायदा उठाने की कोशिश की जाती है। राधास्वामीमत सिखलाता है कि इन्सान को रूहानियत की नेमत का पूरा फ़ायदा तब ही हासिल हो सकता है जब वह किसी ऐसे महापुरुष से तअल्लुक़ क़ायम करे जो रूहानियत के सरेचश्मा हैं और जो रूहानियत की बख़्शिश ही के लिये दुनिया में भेजे गये हैं।

बचन (११४)

जब मायाधारी और जगत् के पदार्थों से सङ्ग विलास करने वाला मन कठोर हो जाता है तो राग व द्वेष के बस पड़ कर ईर्षा के सन्ताप सहता है। ईर्षा दरअसल क्रोध अङ्ग की एक शाख़ है। क्रोध तो कभी कभी ज़ोर से प्रकट हो कर ख़ारिज हो जाता है लेकिन ईर्षा रूईलपेटी आग की तरह हमेशा सुलगती रहती है और हरचन्द इन्सान के पास भोग व सुख के सभी सामान अन्न, धन, सन्तान वग़ैरह मौजूद हों लेकिन ईर्षा का बाण लग जाने से उसे इनमें से किसी में रस नहीं आता। वह हमेशा ईर्षा की अग्नि में जलता रहता है और अपने से बढ़कर किसी

गुणी या धनी को बरदाश्त नहीं कर सकता और चूँकि दुनिया में एक से एक बढ़ कर गुणी व धनी मौजूद हैं इसलिये उसके लिये हमेशा मातम के सामान बने रहते हैं। ईर्षा एक ऐसा असाध्य रोग है कि जो सच्चे मालिक की ख़ास कृपा और सतगुरु की ख़ास तवज्जुह ही से इन्सान के दिल से दूर हो सकता है।

बचन (११५)

मोह के असली मानी जहालत हैं लेकिन चूँकि लोगों को तजरुबे से मालूम हुआ कि मोहब्बत के वस हो कर इन्सान तरह तरह की बेवक़ूफ़ियाँ करता है और मोहब्बत व जहालत हमेशा सङ्ग दिखलाई देती हैं इसलिये रफ़्ता रफ़्ता मोह के मानी मोहब्बत हो गये और अब यह लफ़्ज़ आम तौर पर इसी मानी में इस्तेमाल होता है। चुनाँचे संसार के मोह के मानी संसार की मोहब्बत है और चूँकि संसार जड़ है इसलिये इसकी मोहब्बत का नतीजा सिवाय जड़ता या जहालत के और क्या हो सकता है? यह जड़ता या जहालत सतगुरु व सच्चे मालिक के चरणों में प्रीति आने से विवेक की आँख खुल कर आप से आप दूर हो जाती है। विवेक की आँख खुलने पर जीव को संसार की असलियत की समझ बूझ और अपने नफ़ा नुक़सान की तमीज़ भली प्रकार आ जाती है। चुनाँचे सच्चे सतगुरु

की यही पहिचान है कि उनके साथ प्रीति करने से जीव की समझ बूझ ग़ैरमामूली साफ़ सुथरी होती जाय।

वचन (११६)

लोग पूछते हैं कि जीव स्वतन्त्र है या परतन्त्र। जवाब यह है कि सृष्टि-नियमों का पालन करता हुआ जीव जो चाहे कर सकता है मगर असली मानी में न वह स्वतन्त्र है न परतन्त्र। एक हद तक जीव स्वतन्त्र है और उसके बाद परतन्त्र है। अगर जीव स्थूल देह से आज़ाद हो जाय तो स्थूल-देह-सम्बन्धी सृष्टि-नियमों से उसे फ़ौरन् स्वतन्त्रता मिल जाय और अगर उसका मन से भी छुटकारा हो जाय तो उसकी सुरत आज़ाद हो कर सच्ची स्वतन्त्रता में वर्त सकती है।

सवाल—क्या ऐसी हालत होने पर भी सुरत संसार में लौट सकती है?

जवाब—नहीं।

सवाल—तब तो सुरत स्वतन्त्र न रही?

जवाब—स्वतन्त्र के मानी ये हैं कि सुरत जो ख़ुद चाहे सो करे और उसे कोई रोकने या मजबूर करने वाला न रहे, न कि जो दूसरों के मन में आवे सो उसे करना पड़े। निर्मल चेतन अवस्था प्राप्त होने पर सुरत के अन्दर संसार में लौटने की ख़्वाहिश ही नहीं उठ सकती और जब ख़्वाहिश

ही नहीं तो फिर उसकी संसार में वापसी कैसे हो। इसी मानी में बतलाया गया कि सच्ची स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर सुरत संसार में नहीं लौट सकती। सवाल करने वाला ख़्वाहिश कर सकता है कि सुरत संसार में वापस आवे लेकिन सवाल करने वाला सुरत नहीं है, मन है।

बचन (११७)

चूँकि छोटा बच्चा तजरुबे से जानता है कि उसके रोने में बड़ा असर है इसलिये वह अपनी हर एक माँग रो कर पूरी कराता है और जब वाल्दैन किसी क़दर सर्द-मेहरी से पेश आते हैं तो वह और भी ज़ोर से चीख़ता है। यहाँ तक कि वाल्दैन उसकी ख़्वाहिश पूरी करने के लिये मजबूर हो जाते हैं। इसी तरह चूँकि हाकिम जानते हैं कि लोग सज़ा के क़ानून से डरते हैं इसलिये अपने अहकाम सज़ा के क़ानून का डर दिखला कर मनवाते हैं। ठीक इसी तरह प्रेमीजन जानते हैं कि प्रेम व दीनता का अङ्ग ले कर और तबीअत यकसू करके अगर सच्चे मालिक के हुज़ूर में कोई अर्ज़ पेश की जाय तो वह ज़रूर मंज़ूर हो जाती है। इसलिये हर शख़्स के वास्ते, जो मालिक की हस्ती में अक़ीदा रखता है और मालिक से स्वार्थ परमार्थ में मदद का उम्मीदवार है, लाज़मी है कि अपने अन्दर प्रेम व दीनता का अङ्ग जगावे और यकसूई तवज्जुह का महावरा करे।

सतसंग में जो सेवा वग़ैरह का सिलसिला जारी है वह इसी ग़रज़ से है कि हर सत्संगी के अन्दर प्रेम व दीनता का अङ्ग पैदा हो। और सुमिरन व ध्यान के उपदेश की पहली ग़रज़ यही है कि सत्संगी तवज्जुह की यकसूई हासिल करने में कामयाब हो।

बचन (११८)

सवाल सत्संगी का—मुझे बतलाया जाय कि मैं किस दिन मरूँगा ?

जवाब—यह सवाल नामुनासिब है। महात्माओं का बचन है कि मनुष्य को संसार के सब काम यह समझ कर करने चाहियें कि वह कभी न मरेगा और परमार्थ के काम यह ख़्याल रख कर करने चाहियें कि न मालूम कब मौत आ जाय। इसलिये हर सत्संगी के लिये मुनासिब है कि मौत के लिये हर वक़्त तैयार रहे और जो मौक़ा व फ़ुरसत मिले उसे मालिक की याद में सर्फ़ करे। इसके अलावा समझना चाहिये कि जब कि मालिक की तरफ़ से यह इन्तिज़ाम है कि मनुष्य को मौत के दिन का पता न हो तो इस पर्दे का उठा देना ज़रूर सख़्त फ़िसाद पैदा करेगा।

बचन (११६)

अगर इन्सान अपने तईं सँभाल ले तो उसे यह गति हासिल हो सकती है कि हर मुश्किल मौक़े पर मालिक की जानिब से मदद व रोशनी मिले जिसकी मदद से वह भव-सागर में ऐसे तैर सकता है जैसे लकड़ी के सङ्ग जुड़ा हुआ लोहा। लेकिन मुश्किल यह है कि अव्वल तो इन्सान अपने तईं बड़ा चतुर समझता है और सख़्त मुश्किल सिर पर आये बग़ैर मालिक की मदद की परवा ही नहीं करता और दोयम् अगर कोई शख़्स परवा भी करता है तो सहूलियत मिलने पर लोभ या काम के वस हो कर ऐसा गिर जाता है कि उसका अन्तरी तार टूट जाता है। मालिक से अन्तरी सम्बन्ध क़ायम रखने के लिये हमेशा चौकन्ना रहने की सख़्त ज़रूरत है। यह दुरुस्त है कि साधारण लोगों में न इस क़दर एहतियात का माद्दा है और न ही मालिक के साथ अन्तरी सम्बन्ध क़ायम करने की क़ाबिलियत है। लेकिन उनके हासिल करने और एहतियात से बरतने की आदत डालने के लिये कोशिश तो हर कोई कर सकता है। करते करते सभी काम सफल हो जाते हैं। इसके अलावा याद रखना चाहिये कि जो साधन सत्संगियों को बतलाये गये हैं उनकी कमाई से मुनासिब क़ाबिलियत भी पैदा हो जाती है और एहतियात से बर्तने का शऊर भी आ जाता है।

वचन (१२०)

बाज़ लोग कहते हैं कि सत्य तो सब किसी की जायदाद है फिर गुरू की क्या ज़रूरत है। जवाब यह है कि अगर किसी को गुरू की मदद के बग़ैर सत्य प्राप्त हो जाय और उसे पता लग जाय कि सब इन्सान उसका सा अधिकार रखते हैं तो उसका ख़्याल दुरुस्त है। लेकिन जिस को सत्य प्राप्त नहीं हुआ और वह उसकी तलाश में है तो उसके लिये इस ख़्याल का दिल में जगह देना नुक़्सानदेह होगा। सच तो यह है कि सिवाय अवतरित पुरुषों के हर किसी को गुरू की मदद की ज़रूरत है। साधारण पुरुषों का मन बेदार होता है और वह संसार की तरफ़ दौड़ता है और अगर कोई बड़ा सूरमा है तो ज़्यादा से ज़्यादा वह अपने मन को चुप यानी शान्त करा सकता है—हरचन्द यह काम भी सख़्त मुश्किल है—लेकिन मन को चुप कराने पर इन्सान को नींद या ग़फ़लत आ जाती है और नींद या ग़फ़लत आने पर मन फिर बेक़ाबू हो जाता है इससे ज़ाहिर है कि हर साधारण मनुष्य के लिये गुरू की ज़रूरत है।

यह दुरुस्त है कि सत्य सब किसी की जायदाद है लेकिन जिसे शऊर नहीं है और जिसकी आँखें बन्द हैं, न वह अपनी जायदाद पर क़ब्ज़ा कर पाता है और न उससे लुत्फ़ उठा सकता है। जैसे सूरज की रोशनी सब किसी

की जायदाद है लेकिन अन्धे आदमी या चमगादड़, उल्लू वग़ैरह जानवर उसकी रोशनी से कुछ फ़ायदा नहीं उठा सकते इसी तरह साधारण लोग अन्तरी आँख खुले बग़ैर सत्य का सूरज प्रकट चमकते हुए भी उसके प्रकाश के आनन्द से महरूम रहते हैं।

वचन (१२१)

जैसे यह एक सृष्टिनियम है कि इस संसार में जन्म लेने के लिये हर आत्मा को, चाहे वह कितना भी महान् क्यों न हो, माँ बाप की शरण लेनी पड़ती है ऐसे ही यह भी एक सृष्टिनियम है कि हर जीवात्मा को, चाहे वह कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो, इस संसार से पार होने के लिये सतगुरु की शरण लेनी पड़ती है। जो लोग यह विचार करने का हौसला करते हैं कि बिला सतगुरु की मदद के काम चला लेंगे उनको यह मालूम नहीं है कि जिन रुकावटों ने उनकी आत्मा को मन व माया की क़ैद में रोक रक्खा है उनको फ़तह करने के लिये उनकी शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ बिल्कुल असमर्थ हैं। उन रुकावटों को सिर्फ़ आत्मशक्ति जीत सकती है और यह तभी जाग सकती है जब कोई कामिल पुरुष अन्तर व बाहर मदद दे।

वचन (१२२)

सवाल—एक शख़्स सत्संगी है लेकिन बुरे अङ्गों में वर्तता है और दूसरा शख़्स ग़ैरसत्संगी है लेकिन अच्छा चाल चलन रखता है, दोनों में कौन बेहतर है ?

जवाब—मौजूदा हालत के लिहाज़ से ग़ैरसत्संगी बेहतर है लेकिन हो सकता है कि सत्संगी के अन्दर से पिछले जन्मों का मसाला ख़ारिज हो रहा हो इसलिये अगर कोई सत्संगी ज़ाहिर में बुरे अङ्गों में वर्तता है लेकिन अन्तर में अपनी कमज़ोरी देख कर झुरता व पछताता है और सँभल कर चलने के लिये मुनासिब यत्न करता है तो उसकी ज़ाहिरा हालत देख कर उसके ख़िलाफ़ नतीजा निकालना नादुरुस्त होगा। पूरे सतगुरु की शरण का मिल जाना कोई छोटी बात नहीं है। यह गति भी उत्तम संस्कारों की वजह से मिलती है इसलिये अगर किसी सत्संगी में हज़ार औगुन हैं और यह गुन है तो इस गुन को नज़रअन्दाज़ नहीं किया जा सकता। इस गुन के लिहाज़ से सत्संगी ग़ैरसत्संगी पर सबक़त ले जाता है। चुनाँचे कबीर साहब का वचन है:—

कबीर मेरे साध की निन्द्या करो न कोय।
जो पै चन्द कलंक है तउ उजियारा होय॥

कबीर साहब फ़र्माते हैं कि मेरे साध जन की कसरें देख कर उनकी निन्दा मत करो क्योंकि वह बेचारा अपनी

कसरें दूर करने के लिये मुनासिब यत्न कर रहा है और अपने पिछले कर्मों व आदतों की वजह से मजबूर है लेकिन वह साधन करके दिन बदिन अपना बोझ हलका कर रहा है। एक दिन उसकी सब कसरें दूर हो जायँगी। देखो हरचन्द हिन्दूशास्त्रों में चन्द्रमा के सिर दोष लगाया गया है लेकिन बावजूद दोषी होने के चन्द्रमा संसार को रोशनी पहुँचाता है ऐसे ही साध जन भी बावजूद अपनी कसरों के इस क़ाबिल होता है कि दूसरों को रोशनी पहुँचावे।

बचन (१२३)

जो लोग अन्तरी शब्द की निस्बत शङ्का करते हैं वे दरअसल अन्तरी शब्द की असलियत से नावाक़िफ़ हैं। संसार में दो चीज़ें हैं—जड़ प्रकृति यानी माद्दा और शक्ति यानी क़ुव्वत। और शक्ति के दो स्वरूप हैं—गुप्त और प्रकट। जब शक्ति गुप्त है तो अरूप व अनाम है और जब शक्ति प्रकट होती है तो पहले उसके भण्डार यानी मख़ज़न में क्षोभ या हिलोर पैदा होती है और फिर शक्ति की धारें बाहर फैलती हैं। चेतन-शक्ति का यह क्षोभ व धार रूप ही राधास्वामीमत में निज शब्द कहलाता है। इस शब्द से सम्बन्ध क़ायम करने के लिये मुनासिब दर्जे की सूक्ष्मता व पवित्रता प्राप्त करनी होती है और इससे सम्बन्ध क़ायम होने पर मनुष्य की सुरत आप से आप शरीर व मन की

क़ैदों से आज़ाद हो कर उसके प्रकट होने के स्थान से जा मिलती है क्योंकि यह शब्द परम आकर्षक व परम समर्थ है। इस निज शब्द की अगर इन्सानी बोली में नक़ल उतारी जावे तो धार का शब्द राधा और क्षोभ का शब्द स्वामी बनता है और इसलिये राधास्वामी शब्द सच्चे मालिक का निज नाम बयान किया जाता है।

वचन (१२४)

ज़िन्दगी बसर करना भी एक ऐसा हुनर है जिससे ज़्यादातर लोग नावाक़िफ़ हैं। पिछले वक्तों में इस मुल्क का तर्ज़ ज़िन्दगी हालात गिर्द व पेश (देश काल) के मुवाफ़िक़ था इसलिये लोगों को किसी ख़ास फ़िक्र की ज़रूरत न थी लेकिन अब ज़माना बिल्कुल बदल गया है। थोड़े थोड़े रक़बों में हज़ारों आदमी बसते हैं। शहरों के मुहल्ले मक्खियों के छत्तों से भी ज़्यादा गुंजान आबादी रखते हैं। खाने पीने की चीज़ों का यह हाल है कि हर शै (वस्तु) के अन्दर मिलावट मौजूद है और गृहस्थी के ख़र्चों का यह हाल है कि अमीर व ग़रीब सभी तंग आ रहे हैं। इन हालात में किसी का यह उम्मीद करना कि बिला ख़ास यत्न व फ़िक्र के आराम से ज़िन्दगी बसर कर ले, क़तई ग़लत है। हमें अपनी व अपने बाल बच्चों की तन्दुरुस्ती का ख़ास तौर ख़्याल रखना होगा। लोगों का ख़ून पतला पड़ जाने से

उन्हें क़िस्म क़िस्म की बीमारियाँ झेलनी पड़ती हैं। अगर इस वक़्त एहतियात से काम न लिया जावेगा तो जिस्म और भी कमज़ोर व बीमार हो जायँगे और परमार्थ कमाना तो दूर रहा, सब की सब उम्र रोते पीटते गुज़रेगी।

बचन (१२५)

सच्चे सतगुरु की बहुत सी पहचानें हैं। वैसे हर मुतलाशी के लिये सबसे बेहतर पहचान वही है जिससे उसको सतगुरु में विश्वास आवे लेकिन सबसे असली पहचान यह है कि जिस ग़रज़ के पूरा करने के लिये मुतलाशी सतगुरु की शरण लेता है वह पूरी हो। इन दो के अलावा और भी बहुत सी पहचानें हैं। मसलन् सतगुरु के समान किसी साधारण मनुष्य का हृदय कोमल नहीं होता। उनसे प्रीति जोड़ने पर मनुष्य के हृदय में आप से आप मालिक के लिये गहरा प्रेम जाग जाता है। उनकी सोहबत में रहने से मनुष्य निश्चिन्त हो जाता है क्योंकि सतगुरु ख़ुद चिन्ता से रहित होते हैं। इन बातों के अलावा जीवों के साथ सतगुरु के बर्ताव में एक ख़ास निरालापन रहता है। वह जीवों के साथ बेग़रज़ प्रेम करते हैं। वह अपना काम किसी मनुष्य के भरोसे नहीं करते। वह बुद्धिज्ञान के बजाय अनुभवज्ञान से काम लेते हैं। वह किसी की अमीरी ग़रीबी व बड़ाई छुटाई का ख़्याल दिल में नहीं लाते। जिस शख़्स के

दिल में सच्चे मालिक के लिये प्रेम व श्रद्धा है वह उसकी इज़्ज़त करते हैं। उनके स्वरूप का अनुमान मुश्किल से होता है यानी जब तक किसी का हृदय शुद्ध न हो वह उनके स्वरूप का अनुमान नहीं कर सकता। वह किसी से वैर विरोध नहीं करते और हर किसी का भला चाहते हैं। वह हमेशा अपने मन व इन्द्रियों पर क़ाबू रखते हैं। वह शब्द-अभ्यास का उपदेश करते हैं और खुद शब्द में रत रहते हैं। उनके पास परमार्थ के मुतअल्लिक़ हर प्रश्न का मुनासिब उत्तर हमेशा तैयार रहता है और जैसा वह उत्तर देते हैं दूसरा कोई नहीं दे सकता।

बचन (१२६)

भक्तिमार्ग पर चलने के लिये अन्दरूनी सफ़ाई की बहुत ज़रूरत है। सच तो यह है कि जब किसी पर मालिक की ख़ास दया होती है तभी वह भक्तिमार्ग पर चल सकता है। देखो हमारे पास रुपया पैसा तभी रहता है जब हम उसकी पूरी सँभाल करते हैं और हमारा जिस्म तभी तन्दुरुस्त व तय्यार रहता है जब हम उसकी हर तरह सँभाल करते हैं और हमारी विद्या तभी याद रहती है जब हम उसकी बख़ूबी सँभाल करते हैं और हम सँभाल उन्हीं चीज़ों की करते हैं जिनमें हमारा प्रेम है। इससे ज़ाहिर है कि जिसके पास रुपया पैसा है उसको रुपये से प्रेम है,

जिसका जिस्म तन्दुरुस्त व तय्यार है उसको जिस्म से प्रेम है और जिसको विद्या बखूबी आती है उसको विद्या से प्रेम है। लेकिन भक्तिमार्ग पर चलने के लिये इस प्रकार के बन्धनों से आज़ादी दरकार है। इन्सान या तो अपने भगवन्त ही से प्रेम करे या दुनिया के इन सामानों से। जैसे दुनिया में इन्सान दो आक़ाओं की ख़िदमत नहीं कर सकता ऐसे ही दो भगवन्तों से प्रेम भी नहीं कर सकता। इसलिये भक्तिमार्ग पर वही प्रेमी चल सकता है जिसके दिल में संसार के पदार्थों के बजाय अपने भगवन्त के चरणों में गहरा प्रेम हो।

— —

बचन (१२७)

इसमें शक नहीं कि सबसे अच्छा वही सत्संगी है जिसने अपने मन व इन्द्रियों को पूरी तरह से बस कर लिया है और जिसके हृदय में सच्चे मालिक से मिलने की तेज़ चाह काम कर रही है और जो इस चाह के पूरा करने के निमित्त मुनासिब यत्न व साधन में लगा है। लेकिन आम सत्संगियों की यह हालत नहीं हो सकती। परमार्थ के हिसाब से दुनिया में सबसे ख़राब वे लोग हैं जो मन के अङ्गों में बेख़ौफ़ हो कर बर्तते हैं। इनसे कम ख़राब वे लोग हैं जो ग़फ़लत की वजह से मन के अङ्गों में बर्तते हैं। और इन दोनों से वे बेहतर हैं जो जब तब

मालिक का डर मानते हैं और अपने मन को बस में रखने की चाह रखते हैं और इनसे बेहतर वे हैं जो अपने सब काम सोच समझ कर करते हैं और मालिक को हाज़िर नाज़िर मानते हैं और ग़लती व क़ुसूर बन पड़ने पर सच्चे दिल से झुरते व पछताते हैं और उनसे भी बेहतर वे हैं जो हर वक़्त मालिक की प्रसन्नता का ख़्याल रखते हैं और मन व इन्द्रियों को क़ाबू में रखकर संसार का काम करते हैं। ज़्यादातर सत्संगी सँभल कर चलने की कोशिश करते हैं और ठोकर खाकर गिर जाने पर झुरते व पछताते हैं और आयन्दा ज़्यादा एहतियात से चलने की फ़िक्र करते हैं और उनके अन्तर के अन्तर मालिक से मिलने की काफ़ी तेज़ चाह मौजूद है। रफ़्ता रफ़्ता उनकी पुरानी कमज़ोरियाँ दूर हो रही हैं और उनके अन्दर सात्विक अङ्ग जाग रहे हैं। पुरानी बीमारी व कमज़ोरी समय ले कर ही जाती है।

वचन (१२८)

जैसे घास का तिनका तोड़े जाने पर अपना वजूद क़ायम रखने के लिये पूरा ज़ोर लगाता है ऐसे ही इन्सान का मन भी उद्धार की काररवाई शुरू होने पर अपने तईं बरक़रार रखने के लिये पूरा ज़ोर लगाता है। जब हम किसी चीज़ को तोड़ा चाहते हैं तो अव्वल उसे अपने हाथों में पकड़ते हैं और फिर उस पर अपना ज़ोर लगाते हैं। जब

हम उस चीज़ को तोड़ने के लिये अपना ज़ोर लगाते हैं तो वह चीज़ अपना ज़ोर लगा कर रुकावट पेश करती है। शुरू में उसका ज़ोर ग़ालिब रहता है लेकिन जब हम हाथों का ज़ोर बढ़ा देते हैं तो रफ़्ता रफ़्ता हमारी ताक़त रुकावट के ज़ोर पर ग़ालिब आ जाती है और वह चीज़ टूट जाती है। गोया किसी चीज़ के तोड़ने के लिये हमें चार मंज़िलों से गुज़रना पड़ता है। अव्वल उसका हाथों में पकड़ना, दोयम् उस पर ज़ोर लगाना और उसका मज़ाहमत पेश करना, सोयम् हमारी ताक़त का मज़ाहमत पर ग़लबा शुरू होना और चहारम् हमारी ताक़त के ग़ालिब आ जाने पर उस चीज़ का टूट जाना। वाज़ह हो कि जीवोद्धार यानी काल व माया के बन्धनों के तोड़ने के सिलसिले में भी इसी क़िस्म की चार मंज़िलों से गुज़रना पड़ता है और वे मंज़िलें ये हैं—अव्वल सतगुरु पूरे की शरण धारण करना, दोयम् साधन करना, सोयम् मुक्तिपद की प्राप्ति और चहारम् निज धाम में दाख़िल होना।

बचन (१२६)

कुछ लोग यह ख़्याल लेकर सत्संग में शरीक होते हैं कि जैसे तैसे अभ्यास की युक्तियाँ सीख लें बाक़ी काररवाई खुद करलेंगे। नतीजा यह होता है कि उपदेश लेने के बाद हरचन्द ज़ोर लगाते हैं लेकिन अन्तर में चाल क़तई नहीं

चलती। इनमें से बाज़ तो जल्द ही ढीले पड़ जाते हैं और बाज़ सत्संग के उपदेश सुनकर या दुनियवी तकलीफ़ों के मौक़ों पर मर्ज़ी के मुवाफ़िक़ सहायता पाकर इस घाट पर आ जाते हैं कि सच्चे दिल से सत्संग के उसूलों पर चलें। उनका मन अहंकार उगल कर दीनता के अंग में वर्तने लगता है और उन्हें राधास्वामीनाम व सतगुरु व राधास्वामी दयाल के चरणों में सच्ची प्रीति व प्रतीति आजाती है। तब उनका अभ्यास कामयाबी के साथ बनने लगता है और अन्तरी तजरुबात हासिल होकर उन्हें पूरा इत्मीनान मालिक की दया, राधास्वामीमत की सचाई व बुज़ुर्गी और अपने कल्याण के मुतअल्लिक़ हो जाता है। अगर कोई चाहे कि दलील से हराकर या ज़ोर से डराकर इस क़िस्म की सच्ची प्रीति व प्रतीति किसी सत्संगी के अन्दर एकदम क़ायम करादे तो नामुमकिन है और ऐसा करना सरासर भूल है। किसी के अन्दर ऐसी तब्दीली वक़्त पाकर ही हो सकती है।

बचन (१३०)

याद रखना चाहिये कि अब वह ज़माना नहीं रहा है कि इन्सान लापरवाई के साथ ज़िन्दगी बसर करें। अगर कोई क़ौम या सल्तनत ज़िन्दा रहा चाहती है और ख़्वाहिश रखती है कि आयन्दा आने वाली नस्ल आराम के साथ

दिन काटे तो उसके सब मेम्बरों को सावधान होकर काम करना होगा। उन्हें आपस में गहरा संगठन रखना होगा और आमदनी व ख़र्च, अपने रोज़गार और अपनी हिफ़ाज़त के मुतअल्लिक़ बढ़िया से बढ़िया तजवीज़ों को अमल में लाना होगा। जैसे कच्चे धागे एक दूसरे के साथ बुन देने से मज़बूत कपड़ा बन जाता है ऐसे ही किसी सङ्गत के मेम्बरों के दिल एक दूसरे में पिरो देने से मज़बूत सङ्गत बन जाती है। सत्संग में जितनी स्वार्थी संस्थाएँ क़ायम की गई हैं उन सब की ग़रज़ सङ्गत के अन्दर बेदारी व संगठन पैदा करना है इसलिये मुनासिब होगा कि सब सत्संगी भाई व बहिनें अपने तईं राधास्वामी दयाल के ख़ान्दान का मेम्बर समझें और मिल कर ज़िन्दगी बसर करना सीखें और सङ्गत की बेहतरी के लिये जो हिदायतें जारी हों उनकी दिलो जान से तामील करें।

बचन (१३१)

सत्संग में ऐसे भी लोग मौजूद हैं जो किसी सत्संगी के अन्दर ज़रा सा नुक़्स नज़र आने पर नाक भौं चढ़ाने लगते हैं और राधास्वामी दयाल में दोष निकालते हैं और यह नहीं समझते कि मनुष्य के पुराने स्वभाव छुड़ाने में वक़्त लगता है। इसके अलावा ऐसे भी लोग हैं जो ख़ास अपने नफ़े व फ़ायदे ही को असली नफ़ा व फ़ायदा सम-

झते हैं। वे कहते हैं कि हमें सिर्फ़ अपने उद्धार से ग़रज़ है, सत्संग के दूसरे कामों से हमें कुछ वास्ता नहीं है। दूसरे काम बनें या बिगड़ें लेकिन हमारा उद्धार हो जाय। मगर यह कोई नई बात नहीं है। ऐसे मूर्ख व ख़ुदग़रज़ लोग हर मुल्क व संगत में होते हैं। आहिस्ता आहिस्ता और ठोकरें खाकर यह मूर्खता व ख़ुदग़रज़ी दिल से दूर होती है।

बचन (१३२)

जिन सत्संगियों को दो चार मर्तबा भी अभ्यास दुरुस्ती से बन पड़ने का तजरुबा हासिल है वे जानते हैं कि आध्यात्मिक उन्नति के लिये तवज्जुह का अन्तर्मुख होना निहायत ज़रूरी है और तवज्जुह के अन्तर्मुख होने में वह रस व आनन्द है कि संसार के किसी सामान के भोग में नहीं है। लेकिन चूँकि यह तजरुबा व ज्ञान आम लोगों को प्राप्त नहीं है और आम लोग मन व इन्द्रियों ही के भोगरस से वाक़िफ़ हैं इसलिये उनकी देखादेखी बाज़ सत्संगी दुनयवी बेहतरी व भोग के सामान मुहय्या होने पर दिल में निहायत ख़ुश होते हैं और उसे ख़ास दया समझ कर मालिक का बार बार शुकराना बजा लाते हैं। मगर मालूम होवे कि दुनयवी तरक़्क़ी हर इन्सान को ज़्यादातर उसके शुभ कर्मों की वजह से हासिल होती है।

सत्संगी को चाहिये कि अपना ज़ाती तजरुबा याद रख कर मालिक की ख़ास दया उस हालत में माने जब उसकी तवज्जुह का रुख़ अन्तर्मुख हो क्योंकि आध्यात्मिक उन्नति की पहली अलामत तवज्जुह का अन्तर्मुख होना ही है। अक्सर देखा गया कि ज़ाहिरा दुख व तकलीफ़ की हालत नमूदार होने पर सत्संगी का दिल संसार से उदास हो गया और उसकी तवज्जुह अन्तर में लग गई। दुनिया के लोग, जिनकी दृष्टि बाहरी बातों पर पड़ती है, ऐसी हालत को मालिक की नाराज़गी से मौसूम करेंगे मगर समझदार प्रेमी इसे मालिक की ख़ास दया तसव्वुर करेगा।

बचन (१३३)

सत्संगी दो क़िस्म के हैं—मुर्दा व ज़िन्दा। मुर्दा सत्संगी वे हैं जो दुनिया के काम काज में मसरूफ़ हैं और मगन व उलझे हुए हैं और जिनके दिल पर मालिक का नाम व मालिक का गुणानुवाद असर नहीं करता। ज़िन्दा सत्संगी वे हैं जो एहतियात की ज़िन्दगी बसर करते हैं और जिनका दिल जब तब, ख़्वाह किसी बाहरी असर की वजह से, ख़्वाह आप से आप, प्रेम से भर जाता है और यह हालत होने पर जो या तो चुपचाप कोने में बैठ कर मालिक की याद करने लगते हैं या प्रेम में भर कर प्रेम व भक्ति की किसी कड़ी का पाठ करने लगते हैं।

वचन (१३४)

सत्संगी की चाल सच्चे आशिक़ या प्रेमी की सी होती है। ज़ाहिद अपनी तसबीह के दाने हाथ में सँभालता है और आबिद आसमान की तरफ़ ख़ाली हाथ फैला कर दुआएँ माँगता है लेकिन प्रेमी जन सच्चे मालिक की भक्ति के जाम भर भर कर पीता है। जिनके दिल में प्रेम की चिनगी मौजूद नहीं है अगर वे किसी वजह से सत्संग में शरीक हो गये तो क्या ? सत्संग के लुत्फ़ से बेबहरा हैं। जो दुनिया के कामों से मोहब्बत करे या दुनिया के भोग विलास को अज़ीज़ रक्खे या अपनी ख़ूबियाँ देख व सुन कर ख़ुश हो और ग़ाफ़िल रह कर ज़िन्दगी बसर करे वह सच्चा प्रेमी नहीं है।

वचन (१३५)

जो लोग अन्तर में चाल चला चाहते हैं उन्हें याद रखना चाहिये कि छठे चक्र पर सुरत की बेदारी शुरू होने पर अभ्यासी की वही हालत होती है जो माता के गर्भ से बाहर आने पर किसी बच्चे की होती है यानी अभ्यासी उस वक़्त अपने तईं बेहद कमज़ोर व बेबस महसूस करता है। पुराने संस्कार अपना ज़ोर लगाकर उसकी सुरत को नीचे की तरफ़ खींचते हैं और सुरत गिर गिर पड़ती है। उस वक़्त अभ्यासी को रक्षा व मदद की वैसी ही सख़्त

ज़रूरत होती है जैसी संसार में जन्म लेने पर बच्चे को होती है। अब जो लोग किसी पुस्तक को गुरू मानते हैं उनसे दर्याफ़्त करो कि उस मौक़े पर कोई पुस्तक, चाहे वह कैसी ही मुतबर्रिक क्यों न मानी जाय, क्या सहायता कर सकती है? पुस्तक तो ख़ुद अपनी रक्षा के लिये हमारी सहायता की मोहताज है। उस मौक़े पर सिर्फ़ हमसे बढ़ कर चेतन पुरुष हमारी मदद कर सकता है और जिसकी सुरत इस स्थान पर पूरे तौर बेदार है वही हमसे बढ़ कर चेतन पुरुष है और उसी को सच्चा गुरू कहते हैं। इसलिये लोग जिस चीज़ में चाहें निश्चय बाँधकर अपना दिल बहला लें लेकिन वक़्त पड़ने पर सच्चे सतगुरु ही की शरण लेनी पड़ेगी।

बचन (१३६)

उद्दालक ऋषि ने अपने बेटे श्वेतकेतु से कहा—ऐ पुत्र! जैसे कोई शख़्स किसी को क़न्धार से आँखें बाँध कर ले आवे और उसे सुनसान जङ्गल में छोड़ दे और वह बेचारा इस हालत में दाएँ बाएँ और आगे पीछे चक्कर काटता फिरे और पुकारे कि मुझे बँधी आँखों से लाया गया है और बँधी आँखों से छोड़ दिया गया है। उस वक़्त कोई दूसरा उसकी आँखों पर से पट्टी खोल दे और कहे—"फ़ुलाँ तरफ़ क़न्धार है उस तरफ़ को जाओ" तो वह

अगर अक़्लमन्द व समझदार है, एक गाँव से दूसरे का रास्ता लेता हुआ एक दिन ज़रूर क़न्धार पहुँच जावेगा। ठीक इसी तरह हर इन्सान बँधी आँखों से संसार में लाया जाता है और बँधी आँखों से छोड़ दिया जाता है। जिस इन्सान को आचार्य यानी असली देश का जानने वाला सतगुरु मिल गया है वह "उस सत् को" जान लेता है और उसके लिये सिर्फ़ इतनी देर का मुआमला रह जाता है जब तक वह अपने भौतिक शरीर से अलहदा नहीं होता। शरीर से अलहदा होते ही वह फ़ौरन् सत् को प्राप्त होता है। जो लोग ऋषियों के वचनों में श्रद्धा रखते हैं उन्हें चाहिये कि इस वचन को ग़ौर से पढ़ें और विचारें आया उन्हें अब भी सतगुरु की ज़रूरत महसूस होती है या नहीं। हुज़ूर राधास्वामी दयाल का वचन है:—

अब अनाम जहँ रूप न नामा। सन्त करें जा वहाँ बिश्रामा॥
सुरत चेत पाया बिस्माद। नहिं जहँ बानी नहिं जहँ नाद॥
आदि न अन्त अनन्त अपार। सन्तन का वह निज दरबार॥
सन्त सभी या घर से आवें। काल देश से जीव चितावें॥
जो चेते तिन ले पहुँचावें। सुरत-शब्द-मारग बतलावें॥
जीव चेत जो माने कहना। ताकौ फिर दुख सुख नहिं सहना॥

इस वचन के अर्थों पर विचार करने से मालूम होगा कि ऋषियों और सन्तों के उपदेश में किस क़दर मेल है।

बचन (१३७)

सवाल—जबकि ऐसे काम करने के लिये कहा जाता है जिनसे हम को मालिक की याद आवे लेकिन अगर किसी को बुरे काम करने से मालिक की याद आती है तो क्या उसे बुरे काम करने की इजाज़त है ?

जवाब—बुरे काम करने से मालिक की याद नहीं आती बल्कि भूलती है अलबत्ता जो सज्जन पुरुष हैं अगर उनसे कभी भूल से कोई बुरा काम बन पड़ता है तो होश आने पर वे सच्चे दिल से झुरते व पछताते हैं और मालिक की याद करते हैं। मगर यह याद बुरा काम करने से पैदा नहीं हुई, यह उनके अन्दर सात्त्विक वृत्ति जग कर पछतावा प्रकट होने से ज़ाहिर हुई है। चुनाँचे हर शख़्स के लिये इजाज़त है कि अपनी कसरें व क़ुसूर याद करके जब तब झुरे व पछतावे। बाज़ लोग ऐसे भी हैं कि जब उन्हें बुरे अंगों में बर्तने पर सज़ा मिलने को होती है तो मालिक की याद करते हैं। यह याद ज़्यादातर झूँठी और ख़ुदग़रज़ी की होती है। सच्ची व असली याद वह है जो प्रेमबस हो उससे उतर कर वह याद कारआमद है जो अपनी ग़लती दिखलाई देने पर पछतावा आकर पैदा हो।

———

वचन (१३८)

अगर कोई शख़्स परमार्थ के रास्ते पर क़दम बढ़ाया चाहता है तो उसे सन्तों का बतलाया हुआ ढंग इख़्तियार करना होगा और वह ढंग सच्चे गुरु की शरण लेकर उनके हमराह इस रास्ते पर चलना है। शौक़ीन परमार्थी के लिये मुनासिब है कि अपने तईं सतगुरु की आज्ञा के अनुसार चलावे और अपने मन में सतगुरु के लिये ऐसी भक्ति व प्रीति पैदा करे कि उनकी रग़बतें व नफ़रतें उसकी रग़बतें व नफ़रतें हो जावें। उसे चाहिये कि सतगुरु की भली प्रकार सेवा करे, उनके सत्संग में रहे और कभी अपने मन को बेख़ौफ़ हो कर बर्तने की इजाज़त न दे। अगर दुनिया के लोग उसकी इस हालत पर हँसी करें तो उसकी परवा न की जावे। उन लोगों को मालूम नहीं है कि इस रियाज़त व मन की तरबियत का क्या फल होता है। याद रखना चाहिये कि मन का वस में लाना निहायत मुश्किल है। इसको वस में लाने की सब से उम्दा तरकीब यही है कि सच्चे गुरु की शरण इख़्तियार की जावे। उनका साया पड़ने से यह मन अपनी चंचलता व मलिनता छोड़ देता है। जो शख़्स सतगुरु का दामन मज़बूती से पकड़ लेता है उसे सच्चे मालिक की शरण आप से आप प्राप्त हो जाती है क्योंकि सतगुरु सच्चे मालिक की शरण लिये हैं। जो शख़्स सतगुरु की शरण इख़्तियार कर लेता है उसकी

यह हालत होती है कि हर नीच ऊँच हालत में, जो उसके सिर पर आती है, वह सतगुरु व सच्चे मालिक की दया महसूस करता है और सदा अपने सिर पर उनकी रक्षा का हाथ देखता है। ऐसी शरण ही को अनन्यभक्ति कहते हैं। उसका नतीजा यह होता है कि प्रेमीजन सतगुरु के हृदय में घर कर लेता है यानी उनका प्यारा हो जाता है और जो उनका प्यारा होता है वह मालिक का भी प्यारा होता है और जो मालिक का प्यारा हो जाता है वही उसके चुनाव में आता है और जो मालिक के चुनाव में आता है उसी को मालिक का दर्शन प्राप्त होता है जैसाकि मुंडक उपनिषद् में आया है:-

"यमेवैष वृणुते तेन लभ्य:"

यानी जिसको वह आप चुन लेता है वही उसे पाता है।

बचन (१३६)

सब मतों की धर्मपुस्तकों में सृष्टि के उत्पत्तिक्रम का हाल लिखा है। इस पर बिचार करने से एक ज़बरदस्त नतीजा निकलता है। मसलन् उपनिषदों में ज़िक्र है कि ईश्वर ने इच्छा की कि मैं एक से बहुत हो जाऊँ और इंजील में आया है कि ख़ुदा ने हुक्म दिया कि रोशनी हो और रोशनी हो गई और इसी तरह दूसरी और चीज़ें पैदा होतो

गईं। ऐसे ही मुसलमान भाइयों का अक़ीदा है कि ख़ुदा ने "कुन" कहा और सब सृष्टि हो गई। इन बयानों से ज़ाहिर है कि अव्वल मालिक के अन्दर एक क़िस्म की ख़्वाहिश पैदा हुई और उसके पूरा होने के सिलसिले में सृष्टि का ज़हूर हुआ। जो अमल सृष्टि के आदि में जारी हुआ वह अब भी जारी है क्योंकि मनुष्य भी अव्वल अपने दिल में इच्छा उठाता है और पीछे उससे कोई कर्म बन पड़ता है। अगर आज हम अपनी सब ख़्वाहिशें मुल्तवी कर दें तो हमारी आँखें देखना, हमारे कान सुनना और हमारी ज़बान बोलना बन्द कर दें और जो कुछ हमने जाना व सीखा है सब का सब भूल जाय। हमारा शरीर हरकत न करे, हमारा मन खड़ा हो जाय, गोया संसार का सभी काम बन्द हो जाय। इससे समझ में आ सकता है कि इच्छा का किस क़दर ज़ोर है और हर अभ्यासी को मालूम है कि अभ्यास में बैठ कर सुरत को अन्तर में जोड़ना या चित्तवृत्ति का निरोध सांसारिक इच्छाएँ उठाने के मुक़ाबिले बिल्कुल उलटा अमल है। यही वजह है कि अक्सर लोग यह शिकायत करते सुनाई देते हैं कि मन बस में नहीं आता। भला मन कैसे बस में आवे? उसके अन्दर तो इच्छाओं का वेग भरा है और जैसे तेज़ रफ़्तार गाड़ी के यकायक रोकने से उसके बन्द बन्द कड़कड़ा उठते हैं ऐसे ही अभ्यास में बैठ कर मन के

एकदम रोकने की कोशिश करने से मन बेहद व्याकुल हो जाता है इसलिये अव्वल इच्छाओं का वेग कम करना ज़रूरी है। यह वैराग्य से हो सकता है लेकिन वैराग्य संसार की चीज़ों के बजाय संसार की चीज़ों के मुतअल्लिक़ संस्कारों और भावों से होना चाहिये और यह तभी मुमकिन हो सकता है जब किसी को अन्तर में आला रूहानी घाट का कोई तजरुबा हासिल हो। ऐसे तजरुबे से जो रस व आनन्द अभ्यासी को प्राप्त होता है वह ऐसा ज़बरदस्त होता है कि उसके मुक़ाबिले संसार के सभी आनन्द निहा-यत फीके मालूम होते हैं। ज़ाहिर है कि ऐसा आनन्द पा कर मन उसके दोबारा हासिल करने के लिये बारम्बार कोशिश करेगा और जब वह देखेगा कि मन के अन्दर भरे हुए संस्कार उसका रास्ता रोकते हैं तो फ़ौरन् वह उन संस्कारों से नफ़रत करने लगेगा। ऐसा होने पर उसके लिये संसार के सब सामान बेअसर हो जायँगे और उसके मन में उनके लिये कोई प्यार न रह जावेगा। यही सच्चा वैराग्य है। अभ्यास करने से यह वैराग्य और मज़बूत हो जाता है और आत्मदर्शन होने पर परम वैराग्य प्राप्त होता है। इसलिये वे प्रेमीजन मुबारक हैं जिनका अन्तर में तज-रुबे प्राप्त होने से संसार का मोह नष्ट हो गया है। ऐसे ही लोग राधास्वामीमत के साधनों से प्रकट फ़ायदा उठा सकते हैं। दूसरे लोगों को दीनता के साथ राधास्वामी

दयाल के चरणों में प्रार्थना करनी चाहिये कि उन्हें भी अन्तरी तजरुबे हासिल हों ताकि वे भी साधन का पूरा लुत्फ़ उठा सकें और अपना जन्म सफल कर सकें।

वचन (१४०)

सत्संग में हर क़ौम, मुल्क, दर्जे व क़ाबिलियत के मर्द व औरत शरीक हैं और शरीक होते रहेंगे और जब कि क़ुदरत को तफ़रीक़ (असाम्य) ही पसन्द है तो मुसावात (साम्य) कोई कैसे पैदा कर सकता है? लेकिन हमारी शोभा इसमें होगी कि जैसे माली मुख़्तलिफ़ रंगों के फूलों को तरतीब देकर एक ख़ूबसूरत गुलदस्ता बना देता है यानी फूलों के रंगों की तफ़रीक़ को अपनी अक़्ल लगाकर ज़्यादा ख़ुशनुमा बना देता है, हम भी सत्संगियों के रूप व रंग, मिज़ाज व क़ाबिलियत की तफ़रीक़ को ऐसी तरतीब दें कि एक सुडौल व क़ाबिलेदीद संगत बन जाय। हमारे लिये मुसावात के सिर्फ़ यह मानी होने चाहियें कि हर सत्संगी को अभ्यास, सेवा व सत्संग और तालीम वग़ैरह के लिये यकसाँ मौक़ा व सहूलियत दी जावे। जिसकी जैसी क़ाबिलियत होगी वह मौक़े व सहूलियत का वैसा ही फ़ायदा उठावेगा और उतने ही में सन्तुष्ट रहेगा। यह नामुमकिन है कि सब यकसाँ प्रेमी, नेकचलन व ख़ुशहाल बना दिये जायँ।

बचन (१४१)

बेकन का क़ौल है कि इन्सान तीन क़िस्म के हौसले किया करते हैं। अव्वल यह कि अपने लिये ताक़त व इक़्तदार हासिल करें। यह सबसे अदना हौसला है। दोयम् यह कि अपने मुल्क को औरों पर तसर्रुफ़ (अधिकार) दिलावें। यह अच्छा हौसला है और पहले हौसले के मुक़ाबिले बेहतर है लेकिन इसमें लोभ का अङ्ग मौजूद है। और सोयम् यह कि नूए इन्सान यानी मनुष्यजाति को क़ुदरत की शक्तियों पर ग़लबा व तसर्रुफ़ दिलावें। बिला शुबहा यह सबसे आला हौसला है। लेकिन मालूम हो कि सन्त यह हौसला रखते हैं कि जीवों को मन और माया की शक्तियों पर फ़तह दिला कर परम व अविनाशी सुख के स्थान में वास दिला दें। ज़ाहिर है कि इसके मुक़ाबिले पहले बयान किये हुए तीनों हौसले हेच अज़ हेच हैं। इन्सान अपने दिमाग़ से ऊँची से ऊँची बात निकालता है और आलमे ख़्याल में ऊँची से ऊँची बुलन्दी पर उड़ कर पहुँचता है लेकिन आलमे नासूत ही के अन्दर रहता है इसलिये उसकी मजाल कहाँ कि सन्तों की ज़ेहनियत के मुक़ाबिले कोई ऊँची बात कह सके।

वचन (१४२)

सत्सङ्गी का सबसे बड़ा दुश्मन ख़ुद उसका मन है। यह मन ऊपर से दीनता भी करता है और प्रेम भी दिखाता है लेकिन अगर इसके छिलके उतार कर अन्दर का हाल देखा जाय तो मालूम होगा कि इसके अन्दर अहंकार और दुनिया के सामान व जीवों का मोह कूट कूट कर भरा है। अहंकार में ज़िन्दा रहने और सुख से ज़िन्दगी बसर करने की चाह भी शामिल है। जब तक किसी मन के अन्दर से यह मोह का ज़हर न निकल जाय उसकी भक्ति और प्रीति का कुछ ऐतबार नहीं। इस मोह ही के सबब से बहुत से सत्संगी अन्तरी तजरुबात के रस से महरूम रहते हैं। वैसे दुनिया में न कोई चीज़ अच्छी है न बुरी, कोई रिश्तेदार या दूसरा इन्सान न अच्छा है न बुरा, मगर यह मन अपने नफ़े की कसौटी पर परख कर चीज़ों व इन्सानों को अच्छा व बुरा तशख़ीस करके (जान कर) उनके लिये रग़बत व नफ़रत क़ायम कर लेता है और एक मर्तबा गहरा बन्धन क़ायम हो जाने पर मुआमला उसके हाथ से निकल जाता है। दुनिया में ऐसे लोग मौजूद हैं जिन्होंने अपना सब धन व माल ख़ैरात कर दिया लेकिन ख़ैरात किये हुए कपड़ों का नामुनासिब इस्तेमाल होते देख कर उनके मन ने तकलीफ़ महसूस की। इससे मन की लाचारी का हाल समझ में आ सकता है। वाज़ह हो कि बिला

सच्चे सतगुरु के चरणों में हाज़री दिये और उनसे मुनासिब सहायता हासिल किये मन की यह कसर हर्गिज़ दूर नहीं हो सकती और बिला इस कसर के दूर हुए अन्तर में सुरत की चाल का जारी होना मुश्किल है। इसलिये फ़र्माया है:—

"अरे मन रँग जा सतगुरुप्रीत ।
होय मत और किसी का मीत ॥"

बचन (१९३)

बाज़ लोग कहते हैं कि नफ़्स यानी मन का मार डालना ही दुनिया से नजात हासिल करने का असली ज़रिया है। उनका ख्याल है कि इन्सान सिर्फ़ क़ुव्वते इरादी (सङ्कल्प-शक्ति) है। इस क़ुव्वत से संसारी वासनाएँ पैदा होती हैं और वासनाओं से फ़िसाद रूनुमा (प्रकट) होते हैं और झगड़े व फ़िसाद से दुख व क्लेश पैदा होते हैं। इसलिये वे कहते हैं कि हर इन्सान का फ़र्ज़ है कि उस क़ुव्वते इरादी यानी "मन" का ख़ात्मा करे। यह "मन" माया का जाल है। उसका नष्ट कर देना ही असली निर्वाण है। और निर्वाण से मुराद मोक्ष या मुक्ति ली जाती है। ये लोग अपनी बात की पुष्टि के लिये महात्मा बुद्ध और ऋषियों के उपदेश का आसरा लेते हैं लेकिन यह भूल जाते हैं कि नफ़्स या मन का ख़ात्मा कर देना मोक्ष-मार्ग में सिर्फ़ पहली मंज़िल है। मन को मार डालने से सिर्फ़ कुछ

मुद्दत के लिये दुनिया की ज़हमतों से छुटकारा हो जाता है लेकिन वह क़ानून यानी सृष्टि-नियम, जिसकी मार्फ़त हमें इस मर्तबे संसार में जन्म लेना पड़ा, बदस्तूर हमारे पीछे लगा रहता है। कुछ अर्से आराम के बाद वह हमें फिर दुनिया में धकेल देता है।

इसके अलावा याद रखना चाहिये कि संसारी बासनाओं का त्याग महज़ नफ़ी (अभाव) की हालत है जिसे महज़ ख़्वाब या बेहोशी की हालत कह सकते हैं। चुनाँचे महात्मा बुद्ध ने सिर्फ़ इस क़िस्म के त्याग पर और ऋषियों ने मन के मारने पर बस नहीं की। महात्मा बुद्ध को जब अन्तरी दर्शन प्राप्त हो गया यानी जब उन्होंने अन्तरी आँख से मालिक के नूर का तजरुबा हासिल कर लिया तभी उनको असली शान्ति प्राप्त हुई। ऐसे ही उपनिषदों में ऋषियों के तजरुबात का जगह जगह ज़िक्र है। मगर अफ़सोस ! इन भूले भाइयों को यह कोई नहीं बतलाता कि ख़्याल यानी विचार की मार्फ़त उन्हें वहीं तक का ज्ञान हासिल हो सकता है जहाँ तक ख़्याल की पहुँच है और आमिल या ऋषि अन्तरी आँख से रूहानी घाट के तजरुबे या सच्चे मालिक का दर्शन हासिल करके सच्ची शान्ति को प्राप्त होते हैं।

बचन (१४४)

कहने को तो हर कोई कहता है कि वह फ़ुलाँ मज़हब का मानने वाला है मगर किसी मज़हब का सच्चा पैरो होना निहायत मुश्किल है। जिसका विश्वास सच्चा है उसके अन्दर दो अलामतें मौजूद होनी चाहियें—अव्वल यह कि उसे दुनिया के दुख व रंज दिक़ न कर सकें, दोयम् यह कि बिला संसार के धन व ऐश्वर्य की प्राप्ति के उसकी तबीअत में हर वक्त ख़ास क़िस्म की ख़ुशी क़ायम रहे। ग़ौर का मुक़ाम है कि जब किसी को मालिक से मिलने या संसारी दुखों से हमेशा के लिये नजात पाने की राह मिल गई तो फ़िर उसके दिल में दुनिया की ऊँच नीच हालतों का असर क्यों हो? जब किसी को दस पाँच हज़ार रुपये मिल जाते हैं वह फूला नहीं समाता तो जब किसी को परम व अविनाशी सुख के धाम की सड़क मिल जाय और उस मुक़ाम से आये हुए या उस मुक़ाम तक पहुँचे हुए किसी कामिल पुरुष की शरण प्राप्त हो जाय, उसके हृदय का कमल क्यों हर वक़्त खिला न रहे?

बचन (१४५)

दुनिया में बहुत से लोग ऐसे मिलेंगे जो अपने मज़हबी फ़रायज़ बड़े क़ायदे से अदा करते हैं यानी उनके अदा करने में कभी नहीं चूकते लेकिन उनकी हर बात से

अहंकार की बू आती है। हरचन्द उनकी ज़ाहिरी सूरत परहेज़गारों की सी होती है लेकिन उनके साथ मोहब्बत करने से तबीअत नफ़रत खाती है। वजह यह है कि उनके दिल में प्रेम नहीं होता और वे अपने मज़हबी फ़रायज़ महज़ रोज़ाना काम के तौर पर अदा करते हैं और चूँकि खुद उन्हें अपनी इस काररवाई से कुछ अन्तरी आनन्द हासिल नहीं होता इसलिये उनका मन इस कमी को अहंकार के ज़रिये पूरा करने की कोशिश करता है। ये लोग अपने अभ्यास, जप, रोज़ा व नमाज़ का लोगों से ज़िक्र करके अपनी वाह वाह कराते हैं और उसे सुन कर खुश होते हैं और यह ख़्याल करके कि कहीं लोगों को यह न मालूम हो जाय कि उन्हें अन्तर में कुछ प्राप्त नहीं है अपनी बाहरी शक्ल बनाये रखने के मुतअल्लिक़ ख़ास एहतियात से काम लेते हैं। ज़ाहिर है कि यह ज़िन्दगी और भजन बन्दगी दो कौड़ी की है। याद रखना चाहिये कि परमार्थ में दिल की सचाई के बग़ैर कुछ प्राप्त नहीं होता। अगर कोई शख़्स सच्चे दिल से मालिक की याद बाक़ायदा करे तो उसे ज़रूर दया व रूहानी तरक़्क़ी हासिल होगी। अगर ऐसा शख़्स बावजूद सच्ची कोशिश के जब तब अपने मज़हबी फ़रायज़ की अदायगी से चूक जाय या कभी उसका मन रूखा फीका होकर साधन में न लगे तो उसे चाहिये कि अपनी भूल चूक व नाकामयाबी

को ख़्याल में लाकर सच्चे दिल से झुरे व पछतावे। यह झुरना व पछताना उसके लिये अज़हद मुफ़ीद होगा। उसके ज़रिये उसको मामूल से ज़्यादा दया हासिल होगी।

ज़िक्र है कि अमीर मुआविया, जो अपने मज़हब के बड़े पक्के थे, हमेशा बाक़ायदा नमाज़ अदा करते थे लेकिन एक रात वह ऐसे सोए कि सुबह हो गई और नमाज़ का वक़्त गुज़रने लगा। हालते ख़्वाब में आपको शैतान ने आकर जगाया और कहा उठो, सुबह हो गई। नमाज़ का वक़्त जा रहा है। अमीर बड़े तअज्जुब में पड़ गये कि यह कैसे मुमकिन है कि शैतान, जिसका काम लोगों को मालिक की याद से हटाना है, उन्हें नमाज़ के लिये जगावे। उन्होंने शैतान से कहा—सच बतला, तू यह काम ख़िलाफ़फ़ितरत (स्वभाव के विरुद्ध) क्यों करता है? उसने जवाब दिया—तुम्हारी मदद करने के लिये। अमीर ने कहा—यह नामुमकिन है। तुझसे सिवाय दुश्मनी के और किसी बात की उम्मीद नहीं हो सकती। आख़िर शैतान ने असल वजह बतलाई और कहा कि मैंने तुम्हें इसलिये बेदार किया कि अगर तुम्हारी नमाज़ क़ज़ा हो जाती तो तुम अपने इस क़ुसूर पर इतना रोते कि ज़मीन तर हो जाती और सातों आसमान थर्रा उठते। जिससे तुम पर ख़ुदा की अज़हद मेहरबानी होती। इसलिये मैंने मुनासिब समझा कि तुम्हें जगा दूँ ताकि तुम हस्बमामूल नमाज़ पढ़ लो और तुम्हारा दिल ठंडा

रहे और तुम्हें खुदा की वह मेहरबानी हासिल करने का मौक़ा न मिले जो नमाज़ क़ज़ा होने पर झुरने व पछताने से मिलती ।

बचन (१४६)

सवाल सत्संगी का—जोग कहते हैं कि जिसका आदि नहीं है उसका अन्त भी नहीं है। इसलिये अगर हमारी सुरतों को आदिकर्म की वजह से संसार में आना पड़ा और वह आदिकर्म अज़ल (हमेशा) से हमारी सुरतों के साथ था तो उसका कभी खात्मा नहीं हो सकता और इसलिये हमारी हर्गिज़ हमेशा के लिये मुक्ति नहीं हो सकती ।

जवाब—अगर आदिकर्म का लेश किसी सुरत के ज़िम्मे सिर्फ़ इस क़दर हो कि कुछ मुद्दत संसार में जन्म मरण का चक्र भुगते फिर ख़त्म हो जाय तो लाज़िमी है कि इस लेश के ख़त्म होने पर वह सुरत इस संसार से बाहर हो जाय। चुनाँचे हरचन्द आदिकर्म का लेश बाज़ सुरतों के साथ अज़ल से चला आता है लेकिन उसकी मिक़दार या तेज़ी ऐसी है कि कुछ अर्से बाद ख़त्म हो जाती है और उस वक़्त उन सुरतों को हमेशा के लिये मोक्ष मिलना लाज़िमी है ।

बचन (१४७)

इन्सान को कितना ही समझाओ लेकिन वह अपनी वासनाओं का गुलाम होने की वजह से एक नहीं सुनता। बाज़ वक्त उसका दिमाग़ किसी बात को समझ भी लेता है लेकिन उसका दिल उसे क़बूल नहीं करता।

ज़िक्र है कि एक क़ैदी बड़ा कमीना और बड़ा पेटू था। उसने अपनी बद हरकतों से दूसरे क़ैदियों की नाक में दम कर रक्खा था। क़ैदियों के शिकायत करने पर क़ाज़ी साहब ने उसे रिहा कर दिया और हुक्म दिया कि वह तमाम शहर में गश्त कराया जावे और लोगों को पुकार कर सुनाया जाय कि यह शख़्स निहायत कमीना है। कोई उसका एतबार न करे, न उसे उधार दे, न उससे पैसा वसूल होने की उम्मीद रक्खे। क़ाज़ी साहब के मुलाज़िमों ने किसी ऊँट वाले का एक ऊँट पकड़ लिया और क़ैदी को उसपर सवार करके दिन भर शहर की गश्त कराई और मुख़्तलिफ़ ज़बानों में पुकार पुकार कर उसकी बद सिफ़ात लोगों को सुनाईं ताकि सब लोग वाक़िफ़ व मुहतात (होशियार) हो जायँ। शाम को गश्त ख़त्म हुई। बेचारा ऊँट वाला पैदल ऊँट के साथ साथ चलता रहा। गश्त ख़त्म होने पर जब उसे ऊँट वापिस किया गया तो उसने क़ैदी से कहा—भाई! अब रात होने लगी है, मेरा घर दूर है, मैं घर वापिस नहीं जा सकता,

मैं ऊँट के दाने का दाम तो छोड़ता हूँ लेकिन घास का दाम तो दिलवा दो। क़ैदी ने जवाब दिया—तअ़ज्जुब है कि तुम दिन भर मेरी निस्बत जो कुछ पुकार पुकार कर सुनाया गया सुनते रहे और जानते हो कि मैं सख़्त नादिहन्द हूँ लेकिन फिर भी तुम मुझ से घास के लिये दाम माँगते हो। क़ैदी ने हज़ार समझाया लेकिन ऊँट वाले पर मुतलक़ असर न हुआ और वह रात भर घास के लिये दाम माँगता रहा। यही हाल आमतौर इन्सानों का है कि दिन रात दिमाग़ से उपदेश सुनते हैं और बहुत सी बातें समझते हैं लेकिन करते वही हैं जो उनका दिल चाहता है।

बचन (१४८)

इन्सान स्वभाव से आज़ादीपसन्द है लेकिन हालात से मजबूर हो कर ताबेदारी की ज़िन्दगी मंज़ूर करता है। चुनाँचे अपनी हिफ़ाज़त के लिये लोगों ने राजा मुक़र्रर करके उनकी मातहती में ज़िन्दगी बसर करना क़बूल किया और जब ज़िन्दगी की कशमकश बढ़ गई और राजा महाराजा अपने धर्मों से ग़ाफ़िल हो गये और दुनिया दुख का सागर मालूम होने लगी तो परमार्थ की तालीम, जिसमें आयन्दा के सुख की उम्मीद दिलाई जाती थी, प्यारी लगने लगी। लोगों ने इस तालीम के बस बड़े बड़े जप तप और यज्ञ किये और दुनिया में बड़े बड़े दानी और फ़िलसफ़ी पैदा हुए

लेकिन कुछ मुद्दत बाद दूसरा ही ज़माना आया और दन्त-कथा और इख़लाक़ से गिरी हुई तालीम ने लोगों के दिलों पर क़ब्ज़ा कर लिया और गंडे, तावीज़, जादू व फलित ज्योतिष का रिवाज क़ायम हो गया। इसके बाद वैश्यधर्म ने ज़ोर पकड़ा और लोगों ने ज़मीन खोद दी, पहाड़ गिरादिए और समुद्र मथ डाले और दुनिया में बड़े बड़े सेठ साहूकार पैदा हो गये। कोई खानों का मालिक है, कोई कारख़ानों का। ग़रज़ेकि संसार में उम्मीद व क़यास से बढ़कर चमक दमक दिखलाई देने लगी। लेकिन अब यह दौर भी ख़ात्मे पर नज़र आता है। तिजारत की क़रीबन् हर चीज़ में धोका, हर चीज़ में मिलावट, न किसी की ज़बान का ऐतबार है, न किसी की नविश्त (लिखा पढ़ी) का। मकर व फ़रेब का बाज़ार गर्म है और कुल दुनिया हाय हाय कर रही है। सवाल यह होता है कि अगर दुनिया सत्संग की तालीम क़बूल करे और लोग सत्संग के उसूलों पर चलने लगें तो दुनिया के अन्दर क्या नया इन्तिज़ाम मुरव्विज होगा ? क्या फिर पण्डित, मौलवी या क़ाज़ी का राज्य होगा ? क्या फिर दन्तकथाएँ और मोजिज़ों व करामातों के क़िस्से दुनिया की रहबरी करेंगे ? क्या फिर तअस्सुब व हठधर्मी व लूट मार के पुराने दिन लौट आयेंगे ? नहीं, सत्संग की तालीम का यह असर न होगा बल्कि सूरते हाल यह होगी कि हर शख़्स को, मर्द हो या औरत, अमीर हो या ग़रीब, गोरा हो या काला, हिन्दू

हो या मुसलमान, ईसाई हो या जैन, अपनी जिस्मानी, दिमाग़ी व रूहानी ताक़तों के बढ़ाने यानी उन्नत करने के लिये यकसाँ मौक़ा मिले बशर्ते कि वह इन ताक़तों का सोसाइटी यानी मुल्क के मुफ़ाद के ख़िलाफ़ इस्तेमाल न करे—यानी हर शख़्स को मदद मिलेगी कि जिस सीग़े में चाहे क़दम रक्खे और किसी को एक दूसरे के मुआमलात में दख़ल देने का हक़ न होगा। लेकिन अगर कोई शख़्स अपनी जिस्मानी या दिमाग़ी ताक़तों को ऐसी तरफ़ इस्तेमाल करने लगे या ऐसे ख़्यालात का प्रचार करे जिससे अवाम को नुक़्सान पहुँचे या पहुँचने का एहतमाल हो तो ज़रूर दस्तन्दाज़ी की जायगी। यही असली मुसावात (साम्य) का वर्ताव है। मुसावात के यह मानी नहीं हैं कि तमाम आदमियों को यकसाँ लम्बाई के कपड़े पहनाये जायँ या लम्बे आदमियों की टाँगें और मोटे आदमियों के जिस्म तराश दिये जायँ या अमीरों का रुपया छीन कर ग़रीबों व कंगालों को तक़सीम कर दिया जाय। न सब इन्सानों के जिस्म यकसाँ बनाये जा सकते हैं, न दिल व दिमाग़। क़ुदरत को तफ़रीक़ (असाम्य) ही पसन्द है और तफ़रीक़ ही से क़ुदरत की नैरंगी व ख़ूबसूरती है। जैसे बैण्ड में मुख़्तलिफ़ बाजे होते हैं—नफ़ीरियाँ, ढोल, वायोलिन वग़ैरह—लेकिन एक राग का ख़्याल रखने से सब बाजों की आवाज़ें एक स्वर पैदा कर देती हैं और आवाज़ों

तफ़रीक़ बाअसे मुसर्रत हो जाती है। ऐसे ही सत्संग की तालीम का यह असर होगा कि मुख़्तलिफ़ दिल व दिमाग़ अपनी अपनी आवाज़ें निकालते हुए सुरीला राग पैदा करेंगे।

बचन (१४६)

सवाल—क्या पत्थर के अन्दर भी मुख़्तलिफ़ रूहानी दर्जे हैं?

जवाब—जहाँ रूह मौजूद है वहाँ रूहानी दर्जे भी किसी न किसी हालत में ज़रूर मौजूद होंगे लेकिन चूँकि पत्थर में रूह का इज़हार निहायत अदना है इसलिये उसके अन्दर रूहानी दर्जे निहायत स्थूल शक्ल में क़ायम होंगे। रूह चूँकि मुकम्मल जौहर है और मालिक का अंश है इसलिये उसके कमालात में किसी तरह का फ़र्क़ नहीं आ सकता और जो चीज़ पत्थर कहलाती है वह दरअसल रूह का जिस्म यानी ग़िलाफ़ है और चूँकि वह ग़िलाफ़ स्थूल और भद्दा है इसलिये उसके अन्दर रूहानी दर्जों का इज़हार निहायत नामुकम्मल तरीक़ से मुमकिन हुआ है।

सवाल—काल पुरुष और दयाल पुरुष में क्या फ़र्क़ है?

जवाब—जो मन व रूह में। मन काल का अंश है और रूह दयाल का।

सवाल—मन तो जड़ बतलाया जाता है?

जवाब—मन रूह के मुक़ाबिले जड़ है लेकिन माद्दे यानी जड़ प्रकृति के मुक़ाबिले चेतन है।

बचन (१५०)

अगर सत्संग की तालीम आमतौर मंज़ूर व मक़बूल हो जाय तो आप से आप दुनिया के सभी कष्ट दूर हो जायँ। चूँकि सत्संग की तालीम मुसावात पर ज़ोर देती है इसलिये लाज़िमी है कि इस तालीम के प्रचार के लिये सत्संग का अधिष्ठाता एक ऐसी हस्ती हो जो अमीर व ग़रीब, गोरे व काले को एक दृष्टि से देखे। विला अधिष्ठाता की ऐसी दृष्टि के दूसरे लोग कभी मुसावात का सबक़ सीख नहीं सकते। सत्संग के अधिष्ठाता के ऐसा होने से सभा के सब सभासदों को भी निष्पक्ष होना होगा। और जैसे पिछले ज़माने में राजाओं व बादशाहों के नेक ख़्यालात की ख़बरें सुनकर दुनियाभर के नेकख़्याल और क़ाबिल आदमी आप से आप उनके दरबार में चले आते थे इसी तरह सत्संग की मुसावात की तालीम व मुसावात की ज़िन्दगी की ख़बर पाकर जगह जगह से फ़िल्सफ़ी व रिफ़ार्मर सत्संग में शरीक होंगे जिनकी मार्फ़त आजकल के फ़िज़ूल और सनसनीख़ेज़ क़िस्सों के बजाय दुनिया में अमन चैन व मुसावात फैलाने वाले लिटरेचर की इशाअत होगी और घर घर मुसावात का प्रचार होने से मर्दों व औरतों की ज़िन्दगी ज़्यादा सुखदायक होगी और इस ज़माने के वे क़ायदे व क़ानून, जिनसे आमतौर मर्द व औरत दु

हो रहे हैं, मनसूख़ हो जायँगे और हर किसी को काफ़ी आज़ादी की ज़िन्दगी बसर करने का मौक़ा मिलेगा। सत्संग की तालीम न किसी पर ज़ुल्म व सख़्ती करना सिखलाती है, न किसी को दौलत व जायदाद से महरूम कराया चाहती है। सब इन्सान, चाहे उनका मज़हब कुछ ही हो और वे किसी नस्ल से हों, पूरी आज़ादी से ज़िन्दगी बसर करने के हक़दार हैं बशर्तेकि वे अपने तईं दूसरों के लिये मुज़िर न बनावें।

पुस्तकों का सूचीपत्र

यह पुस्तकें स्टोरकीपर, दयालबाग, आगरा, से मिल सकती हैं।

नाम पुस्तक	भाषा	मूल्य
——छन्दबन्द——		
१—राधास्वामी बानी-संग्रह भाग १	हिन्दी	१॥)
२—राधास्वामी बानी-संग्रह भाग २	,,	२)
३—प्रेमबिलास भाग १—४	हिन्दी व गुरुमुखी फ़ी	१॥)
४—मुक्तावली	हिन्दी	।)
५—मुक्तावली	तेलुगू	॥)
——वार्तिक——		
६—टेबल् टॉक	अँग्रेज़ी	१)
७—दयालबाग	,,	॥।)
८—प्रेम-समाचार	हिन्दी	॥)
९—अमृत-बचन	,,	२॥)
१०—अमृत-बचन	उर्दू	२)
११—राधास्वामी-मत-दर्शन	हिन्दी, उर्दू, बङ्गला, तेलुगू व तामिल फ़ी	॥)
१२—जिज्ञासा	हिन्दी, उर्दू, बङ्गला, तेलुगू व तामिल फ़ी	॥)
१३—जतन-प्रकाश	हिन्दी	॥)
१४—सतसङ्ग के उपदेश भाग १ व २	,, फ़ी	१॥)
१५—सतसङ्ग के उपदेश भाग ३	,,	१)
१६—शरणाश्रम का सपूत (नाटक)	हिन्दी	।≈)
१७—शरणाश्रम का सपूत (नाटक)	उर्दू	।)
१८—स्वराज्य (सचित्र नाटक)	उर्दू व हिन्दी फ़ी	॥।)
१९—रोज़ाना वाक़ेआत (डायरी १८ सितम्बर सन् १९३० ई० लग़ायत ३१ दिसम्बर सन् १९३० ई०)	उर्दू व हिन्दी फ़ी	॥≈)
२०—भगवद्गीता के उपदेश	,, ,, ,,	१)

Printed by Har Narain, B.A., LL.B., at the Dayalbagh Press, Dayalbagh, Agra.